अध्याय 3

मनुष्य का पतन

मानवजाति की कहानी का द्वितीय चरण दुःखद है। यह नए अभिनेता अर्थात सर्प के आगमन से आरम्भ होता है; और इसमें मानवजाति की निर्दोष अवस्था और परमेश्वर के साथ सिद्ध संबंध से पतन का वर्णन किया गया है।

परीक्षा और पतन (3:1-7)

[1]यहोवा परमेश्वर ने जितने बनैले पशु बनाए थे, उन सब में सर्प धूर्त था; उसने स्त्री से कहा, "क्या सच है कि परमेश्वर ने कहा, 'तुम इस वाटिका के किसी वृक्ष का फल न खाना'?" [2]स्त्री ने सर्प से कहा, "इस वाटिका के वृक्षों के फल हम खा सकते है; [3]पर जो वृक्ष वाटिका के बीच में है, उसके फल के विषय में परमेश्वर ने कहा है कि न तो तुम उसको खाना और न उसको छूना, नहीं तो मर जाओगे।" [4]तब सर्प ने स्त्री से कहा, "तुम निश्चय न मरोगे! [5]वरन् परमेश्वर आप जानता है कि जिस दिन तुम उसका फल खाओगे उसी दिन तुम्हारी आँखें खुल जाएँगी, और तुम भले बुरे का ज्ञान पाकर परमेश्वर के तुल्य हो जाओगे।" [6]अतः जब स्त्री ने देखा कि उस वृक्ष का फल खाने के लिए अच्छा, और देखने में मनभाऊ, और बुद्धि देने के लिये चाहने योग्य भी है; तब उसने उसमें से तोड़कर खाया, और अपने पति को भी दिया, और उसने भी खाया। [7]तब उन दोनों की आँखें खुल गईं, और उनको मालूम हुआ कि वे नंगे है; इसलिए उन्होंने अंजीर के पत्ते जोड़ कर लंगोट बना लिये।

आयत 1. जिस वाटिका में परमेश्वर ने आदम और हव्वा को रखा था उसमें **सर्प** ने प्रवेश किया। यहाँ वास्तविक सर्प का उल्लेख है क्योंकि लेखक ने उसकी पहचान **परमेश्वर द्वारा सृजे गए** एक प्राणी के रूप में की है। इसके साथ ही उसने इब्रानी भाषा के बोलचाल के सामान्य शब्द נָחָשׁ *(नाकाश)* का प्रयोग किया है जो उत्पत्ति 3 में पाँच बार और पूरे पुराने नियम में इकतीस बार आया है। मूसा की छड़ी जो ज़मीन पर फेंकने के बाद सर्प बन गई थी, उसके लिए भी *नाकाश* शब्द का प्रयोग किया गया है (निर्गमन 4:3; 7:15)। यह वे "विषैले सर्प" हैं जिन्हें परमेश्वर ने बलवा करने वाले इस्राएलियों के बीच जंगल में भेजा। आगे भी परमेश्वर ने इसी शब्द का प्रयोग किया, जब उसने मूसा को पीतल का सर्प बनाने को कहा और उसे एक डंडे पर लटकाने के लिए कहा और सभी सर्प के काटे हुओं

ने जब इस सांप को देखा तो वे चंगे हो गए (गिनती 21:6, 7, 9)।[1]

इसका तात्पर्य यह हुआ कि सर्प कोई काल्पनिक ईश्वर या अर्ध दैवीय शक्ति नहीं है जैसे कि कुछ प्राचीन मध्य पूर्व शास्त्रों में पाया जाता है, जैसे *दि एपिक आफ गिलगामेश।*[2] हालांकि, कभी कभी इस दंतकथा को कुछ विद्वान बाइबल की कहानी का स्रोत मानते हैं, लेकिन उत्पत्ति के लेखक कहीं भी मेसोपोटामिया के इस शास्त्र की ओर संकेत नहीं करते।

बाद के यहूदी शास्त्रियों का मानना है कि शैतान ने सर्प का प्रयोग प्रथम स्त्री तथा पुरुष को परीक्षा में डालने के लिए किया। अपोक्रिफल विजडम आफ सोलोमोन के लेखक ने कहा, "परमेश्वर ने हमें भ्रष्टाचार रहित जीवन जीने के लिए बनाया; ... लेकिन शैतान की ईर्ष्या के कारण संसार में मृत्यु आई और जो उसके संग हैं वे इसका अनुभव करते हैं।"[3]

नए नियम के लेखक यह मानते हैं कि शैतान सर्प के द्वारा बोला और उसने अदन की वाटिका में आदी माता पिता के साथ छल किया। यूहन्ना ने यीशु के वचनों को ऐसा लिखा, "तुम अपने पिता शैतान से हो, और अपने पिता की लालसाओं को पूरा करना चाहते हो। वह तो आरम्भ से हत्यारा है, और सत्य पर स्थिर न रहा, क्योंकि सत्य उसमें है ही नहीं जब वह झूठ बोलता, तो अपने स्वभाव ही से बोलता है; क्योंकि वह झूठा है, वरन झूठ का पिता है" (यूहन्ना 8:44)। पौलुस को डर था कि झूठे शिक्षक कुरिन्थियों के विश्वासियों को भरमा रहे हैं; इसलिए उसने इन वचनों को लिखा, "मैं डरता हूं कि जैसे सांप ने अपनी चतुराई से हव्वा को बहकाया, वैसे ही तुम्हारे मन उस सीधाई और पवित्रता से जो मसीह के साथ होनी चाहिए कहीं भ्रष्ट न किए जाएं" (2 कुरि. 11:3)। प्रेरित ने इस बात को माना कि "यह कुछ अचम्भे की बात नहीं क्योंकि शैतान आप भी ज्योतिर्मय स्वर्गदूत का रूप धारण करता है। सो यदि उसके सेवक भी धर्म के सेवकों का सा रूप धरें, तो कुछ बड़ी बात नहीं परन्तु उन का अन्त उन के कामों के अनुसार होगा" (2 कुरि. 11:14, 15)। पौलुस का मानना था कि लोगों को धोखा देने के लिए शैतान अपना रूप बदल सकता है। यह तथ्य इससे स्पष्ट है कि आदि स्त्री और पुरुष को उनके धरती के स्वर्गलोक में धोखा देने के लिए उसने सर्प को अपना हथियार बना कर प्रयोग किया (देखें प्रका. 12:9, 15; 20:2)।

यदि इससे पहले किसी पाठक ने बाइबल में सर्प के बारे में न पढ़ा हो तो वह इस विवरण से आश्चर्य में पड़ सकता है। हालांकि, इसका झटका उस स्त्री से अधिक नहीं होगा जिसने इसके बारे में कभी संदेह नहीं किया था। वह अचानक अपने आपको एक सर्प से बातचीत करते हुए पाती है जो **अन्य जंगली जानवरों से**, जिनको परमेश्वर ने सृजा, **अधिक धूर्त था**। धूर्त, עָרוּם *(आरूम)* शब्द का सकारात्मक प्रयोग किया जाए तो यह "चतुर" या "बुद्धिमान" के रुप में समझा जा सकता है (नीति. 12:16, 23; 13:16; 14:8, 15, 18; 22:3; 27:12)। लेकिन इसका नकारात्मक अर्थ भी निकाला जा सकता है जब इसका प्रयोग "धूर्त" या "चतुराई" के रूप में किया जाता है (अय्यूब 5:12; 15:5; देखें निर्गमन 21:14; यहोशु 9:4; भजन 83:3)। इसका विशेष उपयोग उत्पत्ति 3:1 के संदर्भ

में सर्प के लिए किया गया है। 3:1-5 में हम सर्प की धूर्तता और 2:25 में आदम और हव्वा के भोलेपन के विरोधाभास को देखते हैं।[4]

सर्प ने **स्त्री** से ही क्यों बात की और पुरुष से बात क्यों नहीं की, इस अनुच्छेद में अस्पष्ट है। किसी ने ऐसा कहा कि स्त्री पुरुषों से अधिक कमज़ोर हैं। पौलुस ने इसका इस प्रकार विश्लेषण किया है, "और आदम बहकाया न गया, पर स्त्री बहकाने में आकर अपराधिनी हुई" (1 तीमु. 2:14)। दूसरी तरफ़ पौलुस ने हव्वा की प्रकृति पर कुछ भी नहीं कहा है जबकि वह आदम से अधिक भोली थी। इसके विपरीत पौलुस ने यह कहा कि उसका पति ने तो सब देखते हुए पाप किया जबकि वह बहकायी गई।[5] जब परमेश्वर ने आदम को कहा कि वह यदि "भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष" से खाए तो वह मर जाएगा, तब तक हव्वा नहीं सृजी गई थी (2:17)। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मना किए गए वृक्ष के बारे में जो ज्ञान हव्वा को था वह उसने आदम से ही प्राप्त किया था। संभवतः सर्प इसके बारे में जानता था क्योंकि उसने अपने प्रश्न को परमेश्वर के द्वारा मना करने और उसके चरित्र को गलत समझने के रूप में अनुवाद किया।

परीक्षा एक साधारण प्रश्न के साथ आरंभ हुई: **"क्या सच है कि परमेश्वर ने कहा, 'कि तुम इस वाटिका के किसी वृक्ष का फल न खाना'?"** सीधे तौर पर सर्प ने परमेश्वर की आज्ञा को बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत किया कि उसने पुरुष और महिला को वाटिका के किसी भी वृक्ष के फल खाने की अनुमति नहीं दी। यह, बिल्कुल गलत था, क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें केवल एक वृक्ष छोड़कर वाटिका के सभी वृक्षों के फलों को खाने की अनुमति दी थी। प्रश्न को इस प्रकार से जोड़ तोड़ कर बोलने से सर्प हव्वा के मन में परमेश्वर के चरित्र के प्रति संदेह पैदा करना चाहता था।

आयतें 2, 3. स्त्री का प्रत्युत्तर **सर्प** को परमेश्वर का कथन सुधारने का एक प्रयास था; फिर भी ऐसा करने के द्वारा उसने स्वयं उस कथन बढ़ा चढ़ाकर कहा। सर्वप्रथम हव्वा ने ठीक-ठीक वर्णन किया कि परमेश्वर ने उन्हें **वाटिका के किसी भी वृक्ष का फल बिना रोक टोक खाने** की अनुमति दी है, परंतु उसने यह कहकर कुछ ज़्यादा बोल दिया कि वाटिका के मध्य में लगे वृक्ष का फल खाने से उन्हें मना किया गया है। यह कहने के बजाय कि उन्हें उस वृक्ष का फल खाने से मना किया गया है उसने यह जोड़ा कि वे उसको छू भी नहीं सकते अन्यथा वे मर जाएंगे।[6] हव्वा के कथन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उसने सोचा कि इस प्रकार का वृक्ष वाटिका में लगाने और उसका आनंद उठाने से मना करना, परमेश्वर की ओर से कठोर और मनमाना है।

आयतें 4, 5. इस समय, सर्प ने यह उचित अवसर पाया कि वह परमेश्वर के चरित्र पर झूठा आरोप लगाए। उसने हव्वा से कहा, **"तुम निश्चय न मरोगे, वरन परमेश्वर आप जानता है, कि जिस दिन तुम उसका फल खाओगे उसी दिन तुम्हारी आंखें खुल जाएंगी, और तुम भले बुरे का ज्ञान पाकर परमेश्वर के तुल्य हो जाओगे।"** दूसरे शब्दों में उसने यह घोषणा की कि परमेश्वर भला और दयालु नहीं है और आदम और हव्वा के प्रति उसके हृदय में अच्छी योजना नहीं थी। सर्प ने परमेश्वर को स्वार्थी, ईर्ष्या करने वाला और धोखाधड़ी करने वाला करार कर

दिया। उसने यह दावा किया कि इस मनाही में परमेश्वर का उद्देश्य यह था कि वे “भले और बुरे का ज्ञान” न रखें और “परमेश्वर के समान” न बन सकें। सर्प ने स्त्री के मन यह डाला कि परमेश्वर उसे उसके अधिकार: परमेश्वर के समान होना, अमर रहना और भले और बुरे के ज्ञान, से दूर रखना चाहता है।

हमें स्मरण रखने की आवश्यकता है कि आदम और हव्वा धरती पर स्वर्गलोक के समान स्थान पर रहते थे जहाँ उनके आवश्यकता की सभी सामग्री उपलब्ध थी। परमेश्वर ने यह घोषणा की थी उसकी सृष्टि न केवल “अच्छी है” बल्कि “बहुत अच्छी” है। फिर भी, आदम और हव्वा के मन में यह बात घर कर गई कि परमेश्वर उनसे बहुत अच्छी चीज़ों को छिपा रहा है। उन्होंने सोचा होगा कि परमेश्वर के समान होना और उसके समान ज्ञान प्राप्त करने के लिए सृष्टिकर्ता के आज्ञा का उल्लंघन करना बहुत बड़ी बात नहीं होगी। यदि इसे थोड़ी गहराई से सोचें तो यही पता चलता है कि परमेश्वर के तुल्य होने की भावना ने संभवतः उनके मन में घमण्ड उत्पन्न किया होगा और वे इस परीक्षा को नहीं टाल सके।

आयत 6. जबकि परमेश्वर ने उन्हें भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने को मना किया था, फिर भी आँखों की अभिलाषा जो **स्त्री** के मन में समाई थी, बहुत प्रभावशाली साबित हुई। सर्वप्रथम, यह उसकी इन्द्रियों में जागृत हुआ और जब **उसने देखा कि वृक्ष का फल खाने के लिए अच्छा है** तो उसके मन में नया और स्वादिष्ट फल चखने की तीव्र जिज्ञासा उत्पन्न हुई। जैसे अध्याय 1 में यह विश्लेषण दिया गया है कि “अच्छा” טוֹב *(तोब)* शब्द पूरे सृष्टि के लिए प्रयोग किया गया है (1:4, 10, 12, 18, 25, 31); हर एक सृजी गई वस्तु अच्छी थी और परमेश्वर ने जिसे जिस उद्देश्य के लिए रचा था उसके अनुरूप थी। *तोब* का अर्थ कुछ बहुत सुंदर भी हो सकता है या फिर इसका नैतिक आधार भी हो सकता है; लेकिन यहाँ, स्त्री ने यह निर्णय लेकर परमेश्वर का स्थान ले लिया कि कुछ खाने के लिए “अच्छा” है जो कि उनको खाने के लिए मना किया गया था। यह आवश्यक नहीं है कि सभी भौतिक वस्तुएँ जो “अच्छी” *(तोब)* है, नैतिक रूप से “अच्छी” *(तोब)* हों, खास कर जब वह अवज्ञाकारिता का कारण हो। नया नियम इसको ही “शरीर की अभिलाषा” (1 यूहन्ना 2:16) कहता है, क्योंकि यह प्रतिबंधित वस्तुओं के लिए या उन लोगों के लिए है जिनके शारीरिक आकर्षण के कारण सामना करना कठिन होता है।

दूसरी बात, वह उस वृक्ष से आकर्षित हुई क्योंकि वह सौंदर्यपरक था और देखने में मनभाऊ था। अन्ततः उसको यह लगा कि वह **बुद्धि देने के लिये चाहने योग्य भी है।** यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि “मनभाऊ” תַּאֲוָה *(थवाह)* और “चाहने योग्य” חָמַד *(चामद)* दोनों शब्दों का अनुवाद दस आज्ञा में “लालच” के रूप में किया गया है। इससे संबंधित क्रियाओं का सूची व्यवस्थाविवरण 5:21 में है लेकिन केवल दूसरा निर्गमन 20:17 में पाया जाता है।[7] यह कहानी बताती है कि परमेश्वर के लोगों को उन खतरों से सावधान रहने की आवश्यकता है जो वस्तुओं के दिखाई देने पर मनुष्य हरकत में आता है और उनसे सावधान रहने चाहिए जो चाहने योग्य है क्योंकि यह “आँखों की अभिलाषा और जीविका का

घमंड” से संबंधित है (1 यूहन्ना 2:16)। स्त्री, न केवल उस खूबसूरत फल की ओर मोहित हुई बल्कि उसके अंदर “बुद्धिमान” שָׂכַל *(साकाल)* बनने की तीव्र इच्छा भी जागृत हुई। उसने कल्पना की कि वह बुद्धि, समझ और ज्ञान प्राप्त करेगी जो उसे उसके जीवन का भविष्य निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र करेगी। उसने स्पष्ट रूप से सर्प के झूठ पर विश्वास किया कि उसको इस प्रकार की बुद्धि, उपलब्धि और दर्जा, जिसे हम परमेश्वर के तुल्य होना कहेंगे, प्राप्त करने पर घमंड करने में सहायता करेगी (3:5)। जब उसने परमेश्वर के निर्देश पालन करने से इनकार किया और अपने घमण्ड, अपनी इच्छा की पूर्ति को प्राथमिकता दी तो उसे जीवन का आनंद - नहीं बल्कि दुःखों - का ही सामना करना पड़ा।

तब उसने [हव्वा] **उसमें से** [वृक्ष] **तोड़कर खाया, और अपने पति को भी दिया, और उसने भी खाया।** वचन यह नहीं बताता है कि आदम भी तर्कसंगत तथ्यों से फंसा। उसने स्त्री को फल खाते हुआ देखा और वह नहीं मरी तो उसने भी वैसा ही किया। उसने परमेश्वर के बजाय अपनी पत्नी की सुनी और वह उसकी इच्छा में ढल गया। स्त्री ने तो धोखे में आकर पाप किया जबकि उसने जानबूझकर परमेश्वर का आज्ञा न मानने के द्वारा पाप किया। दोनों को अपनी गलती का अहसास बहुत देर में हुआ। आदम और हव्वा स्वतंत्र होने के बजाय जीवन भर कड़ी मेहनत और दुःखों में बंध गए जिसका अंत मृत्यु है।

आयत 7. पाप का परिणाम जल्द ही प्रकट होने लगा। **दोनों की आंखे** [समझ] **खुल गई।** यह ज्ञान जो उन्होंने प्राप्त किया, ईश्वरीय बुद्धि या प्रबोधन नहीं था। बल्कि जो उन्होंने पहले ठीक समझा था वह गलत साबित हुआ। **उन को मालूम हुआ कि वे नंगे है।** उन्होंने अपने पहले की निर्दोषता को इस लज्जाजनक ज्ञान में बदल दिया कि वे नंगे हैं, इसलिए उन्होंने अपनी नग्नता को ढांकने के **लिए अंजीर के पत्ते** जोड़कर **लंगोट** बना लिए।

वह किससे छिपने का प्रयास कर रहे थे? एक दूसरे से या फिर परमेश्वर से? संभवतः दोनों से। ऐसा लगता है कि प्रथम पुरुष और स्त्री ऐसे बच्चों के समान निर्दोष थे जिन्होंने वयस्कता को प्राप्त कर लिया और अब उन्होंने पाया कि उनकी लैंगिकता उन्हें लज्जाजनक स्थिति में ले आई है जिसका उन्होंने पहले कभी अनुभव नहीं किया था। इसके साथ ही, परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करने के पश्चात उन्होंने अपनी नग्नता को पहचान लिया। यह तथ्य यह बताता है कि परमेश्वर के साथ उनका सामना होने से पहले ही उन्हें अपने दोषी होने का अहसास हो गया था। उन्हें अपने सृष्टिकर्ता से अलगावपन का अनुभव होने लगा, वे अपने सृष्टिकर्ता के सम्मुख आने में असहज थे।

पतित जोड़े के साथ परमेश्वर की मुलाकात (3:8-13)

8तब यहोवा परमेश्वर, जो दिन के ठंडे समय वाटिका में फिरता था, का शब्द उनको सुनाई दिया। तब आदम और उसकी पत्नी वाटिका के वृक्षों के बीच यहोवा परमेश्वर से छिप गए। 9तब यहोवा परमेश्वर ने पुकारकर आदम से पूछा, “तू कहाँ

है?" [10]उसने कहा, "मैं तेरा शब्द बारी में सुनकर डर गया, क्योंकि मैं नंगा था; इसलिये छिप गया।" [11]उसने कहा, "किसने तुझे बताया कि तू नंगा है? जिस वृक्ष का फल खाने को मैं ने तुझे मना किया था, क्या तू ने उसका फल खाया है?" [12]आदम ने कहा, "जिस स्त्री को तू ने मेरे संग रहने को दिया है उसी ने उस वृक्ष का फल मुझे दिया, और मैं ने खाया।" [13]तब यहोवा परमेश्वर ने स्त्री से कहा, "तू ने यह क्या किया है?" स्त्री ने कहा, "सर्प ने मुझे बहका दिया, तब मैं ने खाया।"

आयत 8. इस अनुच्छेद में लेखक ने मानवरुपी भाषा का प्रयोग किया है: उसने परमेश्वर को एक बड़े वाटिका के स्वामी के रूप में चित्रित किया है जो **दिन के ठंडे समय** अपनी सृष्टि का जायज़ा लेने के लिए वाटिका में टहल रहा है। अक्षरश: इब्रानी भाषा में इसके लिए "दिन के हवा," רוּחַ *(रूहाख)*, जिसका अर्थ "ठंडी हवा बहने का समय" (NJPSV) या "सांझ को ठंडी हवा बहने का समय" (NRSV) प्रयोग किया गया है।

तब पुरुष और स्त्री को **यहोवा परमेश्वर जो दिन के ठंडे समय वाटिका में फिरता था उसका शब्द उन को सुनाई दिया।** शब्द קוֹל *(कौल)* का अनुवाद "आवाज़" भी है[8] लेकिन यहाँ ऐसा प्रतीत होता है कि यह सांझ की ठंडी हवा में पत्तों की उड़ने की आवाज़ है क्योंकि वचन यह संकेत नहीं देता है कि परमेश्वर ने जोड़े का पाप में गिरने के बाद उनसे बात की हो।

जब बाइबल किसी व्यक्ति के लिए यह कहता है कि वह परमेश्वर के साथ चल रहा है तो यह रूपात्मक प्रकटीकरण है जो यह दिखाता है कि हनोक, नूह, अब्राहम और इसहाक जैसे लोगों का परमेश्वर के संग संगति था और वे उसके इच्छा में जीवन यापन करते थे (5:22, 24; 6:9; 17:1; 24:40; 48:15)। अनुग्रहकारी परमेश्वर वाटिका में पुरुष और स्त्री के साथ संगति करने के लिए आया लेकिन अनाज्ञाकारी होने के कारण वे **वृक्षों के पीछे छिप** गए।

आयत 9. परमेश्वर ने उनसे क्रमानुसार प्रश्न पूछे - इसलिए नहीं कि उसे किसी सूचना की आवश्यकता थी परंतु वह उस जोड़े को जो उन्होंने किया उसके प्रति सच्ची आत्म जागरुकता से अवगत करा सके और उनको यह भी बताए कि अब उनकी आत्मिक स्थिति क्या है। **तब यहोवा परमेश्वर ने पुकारकर आदम से पूछा, "तू कहां है?"** हालांकि यह आलंकारिक प्रश्न है, क्योंकि यहोवा जानता था कि वे कहाँ हैं।[9] जब वाटिका में परमेश्वर ने पुरुष और स्त्री का सामना किया, तो वह एक प्रेमी पिता होने के नाते, उन्हें उस अपराध में से बाहर निकालना चाहता था और वह चाहता था कि वे अपने पाप का अंगीकार करे क्योंकि वह जानता था कि यही एक मात्र उपाय है जिसके द्वारा मेल मिलाप हो सकता है।

आयत 10. पुरुष का परमेश्वर के प्रश्न का उत्तर केवल एक बहाना है। उसने कहा कि उसने **वाटिका में उसका** [परमेश्वर] **शब्द सुना**। जिसके कारण वह **डर गया** क्योंकि वह **नंगा था**, इसलिए वह **छिप गया**। पुरुष ने झूठ बोलने की हिम्मत नहीं की, इसलिए वह आधी सच्चाई बोलकर अपने पाप को छिपाकर रखा। हकीकत में वह वार्तालाप को दूसरे विषय पर ले जाने का प्रयास कर रहा

था। उसके पाप करने से पहले वह परमेश्वर का शब्द सुनकर नहीं डरता था और न ही वह अपनी नग्नता के प्रति सजग था। पाप के प्रवेश करते ही वाटिका में सब कुछ दुखद परिणाम के साथ बदल गया।

आयत 11. परमेश्वर मनुष्य के अर्ध सत्य और बहाने को स्वीकार नहीं करता है। उसने उससे दो और प्रश्न पूछकर उस पर दबाव बनाया, **"किस ने तुझे चिताया कि तू नंगा है? जिस वृक्ष का फल खाने को मैं ने तुझे मना किया था, क्या तू ने उसका फल खाया है?"** ये प्रश्न किसी वकील का प्रश्न नहीं है जो प्रमाण के अभाव में दोषी से कई प्रश्न पूछता है जिससे कि वह अपने ही उत्तर के जाल में फंस जाए। इसके विपरीत, ये प्रश्न बुद्धिमान माता पिता के प्रश्न के तरह है जो यह जानता है कि बच्चे ने क्या किया है और यही प्रयास करते हैं कि इन प्रश्नों के द्वारा बच्चा अपनी गलती ईमानदारी से स्वीकार कर ले। यह दो प्रश्न स्पष्ट करते हैं कि परमेश्वर को यह पता चल गया था कि मनुष्य की लज्जा और घबराने का कारण उसका जानबूझकर आज्ञा का उल्लंघन करना था।

आयत 12. आदम और उसके पत्नी के बीच की दूरी उस लज्जा से जो उन्होंने अब एक दूसरे के सम्मुख या परमेश्वर के सम्मुख अनुभव किया था उससे भी अधिक हो गई थी क्योंकि आदम ने अपने पाप का ज़िम्मेदार हव्वा को ठहराया: **"जिस स्त्री को तू ने मेरे संग रहने को दिया है उसी ने उस वृक्ष का फल मुझे दिया और मैं ने खाया।"** अन्ततः आदम ने अपना पाप स्वीकार तो किया किन्तु इसका कारण उसने अपनी पत्नी के सिर मढ़ दिया। संक्षिप्त में आदम कह रहा था, "यह उसकी गलती थी। [क्योंकि] मैंने वही खाया जो उसने मुझे दिया।"[10] अपनी ज़िम्मेदारी को अपने पत्नी पर थोपने का दयनीय प्रयास भी आदम को अपने पाप से निर्दोष नहीं ठहरा सका। फिर भी वह वहीं नहीं रुका। आगे उसने परमेश्वर को ही दोषी ठहरा दिया क्योंकि उस ने ही हव्वा को उसे दिया था। दुखद बात तो यह है कि परमेश्वर ने हव्वा को आदम के लिए एक सहायक बनाया था। अब वह उसे अपनी सहायक के बजाय उसे ठोकर का कारण बताने लगा जो उसके दुःख का कारण बना।

आयत 13. यहोवा ने ज़ोरदार प्रश्नों से **हव्वा** को संबोधित किया, **"तू ने यह क्या किया है?"** जिस तरह से प्रश्न - "यह क्या है?" की शब्दावली बनाई गई है उससे यह आदम की उस प्रतिक्रिया की ओर इशारा करता है जब उसने पहली बार स्त्री को 2:23 में देखा था। तब उसने हकलाते हुए तीन बार स्त्री के लिए "यह" सर्वनाम प्रयोग किया था। 3:13 में प्रयोग किए गए "यह" शब्द में वह बात नहीं थी जब परमेश्वर ने स्त्री की सृष्टि की थी। न ही यह आदम के विचारों में था जब उसने एक सहायक की कल्पना की थी।

स्त्री भी अपने पति के तरह अपने कार्यों के प्रति ज़िम्मेदारी न लेते हुए अपने आपको निर्दोष साबित करने का प्रयास कर रही थी। उसने कहा, "**सर्प ने मुझे बहका दिया तब मैं ने खाया।**" आदम और हव्वा ने यह कहकर कि "मैंने खाया" अपनी अवज्ञाकारिता को स्वीकारा, लेकिन दोनों में से किसी ने भी दोष अपने ऊपर नहीं लिया। अपने पति के समान हव्वा ने भी अपने किए के प्रति किसी

प्रकार का पश्चाताप या दुःख नहीं जताया, बल्कि अपने पाप के प्रति झूठा बहाना बनाने लगी। हव्वा ने इसका ज़िम्मेदार सर्प को ठहराया। जब उसने यह कहा कि उसको सर्प ने धोखा दिया, तो उसके कहने का सार यह था कि सर्प ने "एक आकर्षक प्रस्ताव" उसके सम्मुख प्रस्तुत किया और वह उसके प्रति आकर्षित हो गई।[11]

अध्याय 2 के अंत में जो आनंद और उत्साह था उसके विपरीत अब अनुच्छेद में खौफनाक सज़ा का दुःख भर जाता है। यहाँ यह स्पष्ट है कि जो शान्ति मूल में परमेश्वर और मनुष्य के बीच, स्त्री और पुरूष के बीच, मानवजाति और जानवरों के बीच था वह समाप्त हो गई है। अब पाठक इस बात को जानने के लिए तैयार है कि सृष्टिकर्ता की आज्ञा न मानने पर दोषियों का दंड निश्चित है।

पतन का परिणाम (3:14-19)

परमेश्वर द्वारा विशेष सज़ा की घोषणा विपरीत क्रम में है जहाँ पाप और पापी (या पाप के स्रोत) का नाम दिया गया है। यह अनुच्छेद सर्वप्रथम आदमी का पाप (3:9-11), तब स्त्री का पाप (3:12) और अंत में सर्प (3:13) के पाप का वर्णन करता है। सबसे पहले सर्प को सज़ा सुनाई जाती है (3:14, 15), फिर स्त्री को (3:16) और अंत में आदमी (3:17-19) को सुनाई जाती है।

सर्प का श्राप (3:14, 15)

14तब यहोवा परमेश्वर ने सर्प से कहा, "तू ने जो यह किया है, इसलिये तू सब घरेलू पशुओं, और सब बनैले पशुओं से अधिक शापित है; तू पेट के बल चला करेगा, और जीवन भर मिट्टी चाटता रहेगा; 15और मैं तेरे और इस स्त्री के बीच में, और तेरे वंश इसके वंश के बीच में बैर उत्पन्न करूँगा; वह तेरे सिर को कुचल डालेगा, और तू उसकी एड़ी को डसेगा।"

आयत 14. प्रभु परमेश्वर ने **सर्प** के अपराध बोध को उजागर करने के लिए कोई प्रश्न नहीं किया था, जैसा उसने पुरुष और स्त्री के साथ किया था। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि इस धूर्त प्राणी के पीछे एक पतित आत्मा थी ("वही पुराना सर्प जो दुष्ट और शैतान कहलाता है"; प्रका. 12:9), जो प्रभु के अनुसार उद्धार की संभावना से परे था। इसलिए, उसको पश्चाताप तक लाने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया।[12] सृष्टिकर्ता ने सर्प को महत्व न देते हुए स्त्री के पाप में सम्मिलित होने का कोई स्पष्टीकरण नहीं सुना। बल्कि, इसके विपरीत परमेश्वर **ने संसार में अन्य किसी जानवर** से बढ़कर उसे बड़ी कठिनाई से जीवन निर्वाह करने का श्राप दिया। उसने कहा, **"तू पेट के बल चला करेगा और जीवन भर मिट्टी चाटता रहेगा।"**

क्या यह कथन इस बात को व्यक्त करता है कि श्राप दिये जाने से पहले सर्प रेंगने वाला जन्तु नहीं था? पाठक इस विवरण को जीव वैज्ञानिक मिथ्या के रूप

में न देखें, जो यह विवरण देता है कि सर्प ने किस प्रकार अपने पैरों को खो दिया। इस प्रकार की व्याख्या कुछ यहूदी शास्त्रों पर आधारित है जो पुराने नियम के समय के बाद अस्तित्व में आये थे, जैसे कि पलिस्तीन का तारगुम, जिसके अनुसार "वह अपने पेट के बल चला करेगा, और उसके पाँव कट जायेंगे।"[13] बाइबल के पद्यांश का सामान्य अर्थ यह है कि, वह दूसरे साँपों से भिन्न था, जैसे पूर्वी अफ्रिका का ब्लैक माम्बा सर्प, जो अपने अगले हिस्से को सीधा उठाकर बहुत तेज़ चलता है, यह सर्प अपने पेट - के बल रेंगना पड़ेगा जो कि सभी सांपों के चलने का प्रमुख तरीका है।

रेंगना प्रतीकात्मक हो सकता है। जिस प्रकार उत्पत्ति 9:13 में मेघधनुष एक नई घटना नहीं थी,[14] परन्तु उसका "महत्व" नया था, इसलिए सर्प के रेंगने को भी एक नए रुप में देखा गया होगा। इस श्राप के दिये जाने के बाद, पेट के बल रेंगना और खाना (या जीभ से मिट्टी को चाटना) पराजय और व्यक्तिगत अपमान का एक मुहावरा हो गया है। उदाहरण के रूप में, भजन संहिता 72:9 में, "उसके सामने जंगल के रहने वाले घुटने टेकेंगे, और उसके शत्रु मिट्टी चाटेंगे" (देखें यशा. 49:23; 65:25; मीका 7:17)। सर्प, वास्तविक तौर से न तो धूल खाते हैं और न उस पर जीवित रहते हैं; परन्तु यह पाप के परिणामों की चेतावनी के रूप में है। वे जो जटिल और भरमानेवाली परीक्षाओं का सामना करते हैं, उन्हें पाप के परिणामस्वरूप अपमान को याद रखना चाहिए, जैसा की सर्प के झूठ के साथ हुआ।

आयत 15. वह श्राप जो परमेश्वर ने सर्प को दिया था उससे **उसके और स्त्री के, और उनके वंशजों के बीच** बैर जारी रहेगा। इब्रानी शब्द जो "वंश" के लिए अनुवाद किया गया वह זֶרַע *(जेराह)* है, एकवचन समूहवाचक संज्ञा, जिसका प्रयोग सामान्यतः "होने वाली पीढ़ी" या "वंशज" के लिए होता है; परन्तु कभी-कभी इसका प्रयोग "एक व्यक्ति के लिए होता है, जो पूरे समूह का प्रतिनिधित्व करता है।"[15] उस, श्राप का पहला भाग स्त्री के वंश (मानवता) और सर्प के वंश (सर्पों के संसार) के बीच होने वाले बैर को व्यक्त करता है, जिसके कारण मनुष्य सर्प के उसकी एड़ी को डसने से पहले उसका सिर कुचल देता है। जो भी हाल सर्प के सिर का होगा वही हाल स्त्री के वंश की एड़ी का भी होगा। लेख के अनुसार, **वह उसके सिर को कुचलेगा** [שׁוּף, *शुप]* **और तू उसकी एड़ी को डसेगा** *[शुप]*।" जैसा कि वाक्य के आरंभ और अंत में एक ही इब्रानी शब्द का प्रयोग किया गया है, NIV के अनुवादकों द्वारा बनाये गये अंतर को दर्शाने के लिए छोटा सा तर्क देखा जा सकता है: "वह तेरे सिर को *कुचलेगा,* और तू उसकी एड़ी पर *डसेगा"* (जोर दिया गया)। इससे यह लागू होता है कि चोट खाने वाले प्रत्येक जन को अलग अनुभव होगा: यह सर्प के लिए तो जानलेवा होगा यदि उसका सिर कुचला जाए; परन्तु स्त्री के वंश के लिए केवल दर्द भरा होगा, क्योंकि उसकी एड़ी ही घायल होगी।[16]

वास्तविक तौर से, बाइबलीय वर्णन यह बताता है कि मनुष्य और जानवरों के बीच शान्ति थी, क्योंकि प्रथम पुरुष का उन पर प्रभुत्व था और उसने उनके

नाम रखे थे (2:19, 20)। परन्तु, सर्प ने जो भूमिका जानवरों के प्रतिनिधि के रुप में वास्तविक परीक्षा के समय शैतान के एक उपकरण के रुप में स्त्री को धोखा देने के लिए निभाई थी, उसके कारण यह शांतिपूर्ण सम्बन्ध टूट गया। मानवता के साथ-साथ जीव-जंतुओं का राज्य भी गिर गया। दीर्घकालीन शत्रुता उनके मध्य बनी रहेगी (रोमियों 8:20-22)।

बहुत से विद्वान विश्वास नहीं करते कि यह कथन, स्त्री का वंश सर्प का सिर कुचलेगा, उद्धार की आशा या मुक्तिदाता सम्बन्धी वायदे का संदेश है।[17] तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि सर्प और मनुष्य के वंश के मध्य हमेशा रहने वाले बैर की अपेक्षा में इसका बहुत गहरा अर्थ है। यह सर्प बोलने वाले सर्प से कहीं अधिक था (3:1)। निश्चित रूप से यह शैतान को दर्शाता है, जो एक जन्तु के माध्यम से बोला ताकि मनुष्य को परीक्षा में डाल कर पतन की ओर ले जाए। उत्पत्ति के वृत्तान्त में यह बात अस्पष्ट है। यह केवल समय के बीतने के साथ ही प्रगट होगा कि सर्प के पीछे "शैतान ही असली दुष्ट था, जिसने सम्पूर्ण संसार को भरमा रखा है" (प्रका. 12:9; देखें यूहन्ना 8:44)।

यह स्त्री के बेनाम वंश के विषय में भी दिखाई देता है। तात्कालिक संदर्भ में, वंश (वंशज) - हव्वा की समझ के अनुसार वायदा - शेत के लिए था, जिसका जन्म कैन द्वारा हाबिल की हत्या के बाद हुआ था। अपने तीसरे पुत्र के जन्म पर वह कहती है, "परमेश्वर ने मेरे लिए हाबिल के बदले जिसको कैन ने घात किया, एक और वंश [*ज़रा*, 'बीज'] ठहरा दिया है" (4:25)। यद्यपि हव्वा नहीं जानती थी की यह सब सर्प के सिर को कुचले जाने के विचार के विषय में सम्मिलित होगा, उसने सोचा कि कैसे भी परमेश्वर का वायदा उसके एक वंश (बीज) के द्वारा पूरा होगा।

उत्पत्ति 1-11 में मनुष्य के पाप और विद्रोह के चित्रण के बावजूद, मानव वंश के सम्बन्ध में परमेश्वर का वायदा उत्पत्ति का मुख्य विषय बन गया। तथा, मनुष्य के पाप और बलवे के अलावा, परमेश्वर ने अपने अनुग्रह के द्वारा - सर्वप्रथम स्त्री के द्वारा मानवीय तरीके से, और उससे बढ़कर अधिक स्पष्ट रुप में अब्राहम, इसहाक, याकूब और यहूदा के द्वारा-यह वायदा किया कि उसके पास उनके और उनके वंशजों के लिए बहुतायत की आशीषों का भंडार है। जैसे - जैसे समय बीतता गया, यहूदियों ने स्वयं ही उत्पत्ति 3:15 को मसीह के आगमन के रुप में पूर्ण होना मान लिया था।[18]

क्या हमें सर्प के विषय में परमेश्वर के कथन को *प्रोटोइवान्गालिओन* ("प्रथम सुसमाचार के रुप में समझना चाहिए")? जवाब "हाँ" और "न" दोनों है। वास्तविक संदर्भ में स्त्री हव्वा है न कि मरियम, और उसकी संतान उसके वंशज का वर्णन करती है; यह कुंवारी से यीशु के जन्म की विशिष्ट भविष्यवाणी के विषय में नहीं है।[19] फिर भी, इस वचन के पूर्ण अर्थ के सम्बन्ध में, विलियम सैनफार्ड लासोर कहता है,

मैं मानव जाति के किसी अस्पष्ट सदस्य में अर्थ की पूर्णता को पाता हूँ जो

शैतानी सर्प को नष्ट करेगा, इस प्रकार वह परमेश्वर के उद्धार की योजना में मुख्य भूमिका अदा करेगा। इस रुप में, यह पद सही रूप से सुसमाचार की प्रथम उद्घोषणा है।[20]

भविष्यवाणी का पूरा होना यीशु में और उसके द्वारा अपनी चरम सीमा पर होगा (देखें गला. 3:8-29; इफि. 1:3-14)। पौलुस भी उत्पत्ति 3:15 को दोहराता है जब वह रोमियों की पत्री के समापन में मसीहियों से कहता है कि, "शान्ति का परमेश्वर शैतान को तुम्हारे पांवों से शीघ्र ही कुचलवा देगा" (रोमियों 16:20)।

स्त्री के लिए दण्ड (3:16)

16फिर स्त्री से उसने कहा, "मैं तेरी पीड़ा और तेरे गर्भवती होने के दुख को और बढ़ाऊँगा; तू पीड़ित होकर बालक उत्पन्न करेगी; और तेरी लालसा तेरे पति की ओर होगी, और वह तुझ पर प्रभुता करेगा।"

वचन 16. स्त्री के लिए परमेश्वर के न्याय ने उसके बनाये जाने की भूमिका को भंग कर दिया था। वह आदम की पत्नी, सहायक, और उसकी संतानों की माता होने के लिए रची गई थी (2:18, 23, 24)। संतान उत्पन्न करना सृष्टिकर्ता के न्याय का भाग नहीं था; वह वास्तविक आशीषों का भाग था "फूलो-फलो और पृथ्वी में भर जाओ" (1:28)। स्पष्ट रुप से, पाप के आने से पहले, स्त्री बहुत थोड़ी या संभवतः बिना पीड़ा के संतानों को जन्म देने के योग्य होती। श्राप के बाद, स्त्री होने की उसकी सबसे अद्भुत भूमिका, जन्म देने में, परमेश्वर **उसकी पीड़ा को बहुत बढ़ा देगा**। यह उसके पाप का परिणाम था।

इसी के साथ, परमेश्वर ने कहा, **"तेरी लालसा तेरे पति की ओर होगी और वह तुझ पर प्रभुता करेगा।"** इस कथन का सटीक अर्थ बहुत ही मतभेद वाला है। कुछ लोग सोचते हैं कि "लालसा" शब्द का प्रयोग प्राकृतिक तौर पर यौन इच्छा के लिए किया गया है। यह कथन "वह तुझ पर प्रभुता करेगा" अधिकार के क्रम को पुनः स्थापित करने के लिए हो सकता है (परमेश्वर - पुरुष - स्त्री) "जो सृष्टि के समय स्थापित किया गया परन्तु पतन के समय पलट गया," जब पुरुष स्त्री की अगुवाई में वर्जित वृक्ष के फल में से खा लेता है।[21]

इस दृष्टिकोण को बहुत ही कम समर्थन मिलता है क्योंकि लोग मानव जाति के वंश को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक यौन इच्छा यौन सम्बन्धी आशीष का भाग थी जो पुरुष और स्त्री में आरंभ से ही रची गई थी। यह पतन के बाद पाप का दण्ड नहीं था। इसके साथ ही स्त्री के ऊपर पुरुष का स्वामित्व उस सही सम्बन्ध का भाग था जिसे परमेश्वर ने सृष्टि की रचना से ही विवाह के रुप में स्थापित किया था (2:18-25)। यह हव्वा पर आदम की प्राथमिकता पर आधारित था, जो उसके द्वारा हव्वा का नाम रखे जाने में दिखाई देता है, वैसे ही जैसे उसने बाकी जीव जन्तुओं के नाम रखे थे (पौलुस के तर्क को देखें 1 कुरि. 11:3, 7-12;

1 तिमु. 2:12-15)।

यदि “लालसा” स्त्री का अपने पति के लिए प्राकृतिक यौन इच्छा की ओर संकेत करती है, तब यह तर्कसंगत लगता है कि पुरुष का स्त्री पर “प्रभुत्व” भी एक सामान्य क्रिया है जिसे परमेश्वर ने विवाह के सम्बन्ध में ठहराया है। हालाँकि, “लालसा” की संज्ञा תְּשׁוּקָה *(थेशुकाह)* पुराने नियम में केवल तीन बार मिलती है। उत्पत्ति में उपरोक्त पद्यांश के अलावा, यह श्रेष्ठगीत 7:10 में भी है, जहां पर दूल्हे की अपनी दुल्हन के लिए लालसा उसके इस कथन में मिलती है “मैं अपने प्रेमी की हूँ, और उसकी लालसा मेरी ओर नित बनी रहती है।” “प्रेम और आनन्द” के संदर्भ में यह प्राकृतिक लालसा है; जबकि उत्पत्ति 3:16 में, वह लालसा जिसका स्त्री को अनुभव करना था वह “पाप और न्याय के संदर्भ में है।”[22]

इन लेखों के अलावा, “लालसा” *(थेशुकाह)* एक ही स्थान पर प्रयोग किया गया है: उत्पत्ति 4:6, 7 में। वहां पर यह कैन द्वारा परमेश्वर को ग्रहण योग्य बलि चढ़ाने के विफल होने के बारे में सचेत करता है। इससे अधिक, यह महत्वपूर्ण है कि “प्रभुता” के लिए शब्द מָשַׁל *(माशाल)*, जिसका प्रयोग उत्पत्ति 3:16 में किया गया है, इस संदर्भ में भी मिलता है; और यही वह दो स्थान हैं जहां *(थेशुकाह)* और *(मशाल)* का एक साथ प्रयोग किया गया है। दोनों ही संदर्भ पाप और दण्ड पर केन्द्रित है।

> परमेश्वर ने कैन से कहा, “तू क्यों क्रोधित हुआ? और तेरे मुंह पर उदासी क्यों छा गई है? यदि तू भला करे तो क्या तेरी भेट ग्रहण न की जायेगी? और यदि तू भला न करे तो पाप द्वार पर छिपा रहता है और उसकी लालसा *[थेशुकाह]* तेरी ओर होगी, और तुझे उस पर प्रभुता *[मशाल]* करनी है” (4:6, 7)।

पाप को एक जंगली जानवर के रुप में प्रस्तुत किया गया है जिसकी लालसा कैन को झपटने और उस पर बलवंत होने की है। परमेश्वर ने कैन को “प्रभुत्व” का प्रयोग करने और उसके आधीन न होने के लिए चुनौती दी।

इब्रानी शब्द *(मशाल)* का अर्थ है “प्रभुता” या “अधिकार में” होना, इसका प्रयोग हमेशा राजा का उसकी प्रजा पर अधिकार के लिए होता है।[23] यदि हम गंभीरता से इसके शाब्दिक अर्थ और दोनों विवरणों की संरचनात्मक समानताओं को देखें, तो 3:16 का अर्थ 4:6, 7 के समान दिखाई देता है, जो अधिकार और प्रभुत्व के लिए संघर्ष की ओर संकेत करता है। वैसे ही जैसे पाप की लालसा कैन पर प्रभुता करने की थी, इस लिए लैंगिक अंतरों के मध्य अधिकार का संघर्ष होगा। 3:16 में स्त्री को दिए गये न्याय के अनुसार पति और पत्नी के मध्य वास्तविक सम्बन्ध को कायम नहीं रखा गया। यह पाप और पतन के द्वारा नष्ट हो गया था। सारांश में, यह कथन “वह तेरे ऊपर प्रभुता करेगा,” पुरुष के स्त्री पर अधिकार को व्यक्त करने की आज्ञा नहीं है।

पुरुष के लिए दण्ड और भूमि पर श्राप (3:17-19)

[17]और आदम से उसने कहा, "तूने जो अपनी पत्नी की बात सुनी, और जिस वृक्ष के फल के विषय मैं ने तुझे आज्ञा दी थी कि तू उसे न खाना, उसको तू ने खाया है इसलिये भूमि तेरे कारण शापित है। तू उसकी उपज जीवन भर दुःख के साथ खाया करेगा; [18]और वह तेरे लिए काँटे और ऊँटकटारे उगाएगी, और तू खेत की उपज खाया करेगा; [19]और अपने माथे के पसीने की रोटी खाया करेगा, और अन्त में मिट्टी में मिल जाएगा क्योंकि तू उसे में से निकाला गया है; तू मिट्टी तो है और मिट्टी में फिर मिल जाएगा।"

आयतें 17-19. पुरुष का न्याय सर्प और स्त्री के न्याय से अधिक समझने योग्य है क्योंकि परमेश्वर की आज्ञाओं को अनदेखा करने और अपनी **पत्नी** की सलाह का पालन करने के द्वारा वह अधिक ज़िम्मेदारी को निभाता है।

NASB के अनुसार, इब्रानी लेख में दिया गया है कि, परमेश्वर ने **आदम** से कहा। कुछ यह सुझाव देते हैं कि यह वह पहला मौका था जब परमेश्वर ने **"पुरुष"** के जातीय शब्द אָדָם *(आदम)* को व्यक्तिगत नाम "आदम" से बुलाया। हालाँकि, वही इब्रानी संरचना जो 2:20 में है, वह यहाँ पर मिलती है לְאָדָם *(ले'आदम)*, जिसे NASB "आदम के लिए" प्रस्तावित करता है। यदि इस शब्द को इस पद में व्यक्तिगत नाम के रुप में समझा जाए, तो 3:17 में "आदम" के नाम को दूसरे शब्द के रूप में प्रयोग किया गया है। सभी दूसरी जगहों पर 3:17 से पहले, यह शब्द निश्चयवाचक उप पद הָאָדָם *(हा आदम)* से पहले आता है और इसे "पुरुष" शब्द में अनुवाद किया गया है।

परमेश्वर न्याय करने के समय आदम को सीधे ही दण्ड न दे कर अनुग्रह देता है। उसका श्राप केवल पुरुष पर ही नहीं आता बल्कि उस **भूमि** पर भी आता है जो भोजन को उगायेगी जो उसका परिवार **खाएगा**।

इसके बाद, भूमि **काँटे और ऊँटकटारे** को उपजा कर पुरुष के प्रयासों का विरोध करेगी। यहाँ पर विडम्बना यही है कि: वास्तव में, मनुष्य को वाटिका की देखभाल करने में आनन्दित रहना था क्योंकि यह बहुतायत से फल उपजाती, परन्तु अब भूमि को उसका प्रतिद्वन्दी होना था। अब से यह काँटे और ऊँटकटारे उपजाएगी, और मनुष्य को बहुत **मेहनत** और **पसीना** बहाते हुए जीवित रहने के लिए संघर्ष करना होगा। परिश्रम करना पतन के कारण आया हुआ श्राप नहीं है; किसी भी प्रकार का लाभकारी कार्य मनुष्य के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लाभ के लिए आवश्यक है (2:15 में दिये गये विवरण को देखें)। यद्यपि, प्राचीन कृषि-सम्बन्धी समाज में कई-कई घंटे गर्मी में फसल उपजाने के लिए खेती करना, यह अतिरिक्त प्रयास कठिन परिश्रम होगा। आदम और हव्वा के पास सब कुछ था परन्तु उन्होंने अधिक पाने के प्रयास में सब खो दिया। सदियों से बहुत से लोग उनके पदचिन्हों का अनुसरण कर रहे हैं, और "अपने ही स्वार्थ के हाथों हार कर" कष्ट भोग रहे हैं।[24]

पुरुष के ऊपर न्याय का दूसरा भाग शारीरिक मृत्यु थी। मनुष्य को भूमि में से बनाया गया और उसको वाटिका में रखा गया जहां भूमि उसके जीवन यापन के लिए सब कुछ उपलब्ध कराती थी। लेकिन, संसार में पाप के प्रवेश करने से, यही भूमि उसकी शत्रु बन गई जो मृत्यु के द्वारा आने वाले समय में उसको वापस अपने में मिला लेगी: **"... और अन्त में मिट्टी में मिल जायेगा क्योंकि तू उसी में से निकाला गया है; तू मिट्टी तो है और मिट्टी ही में फिर मिल जायेगा।"** गिराये जाने की सबसे बड़ी दुखद घटना यह थी कि मनुष्य, जिसे परमेश्वर की समानता में रचा गया और जिसको अपने सृजनहार के साथ सांसारिक वाटिका में अनन्तकाल की संगति प्राप्त थी, वह अपने जन्म के अधिकारों से वंचित कर दिया गया तथा केवल भूमि में मिल जाने के लिए ठहराया गया जहां से वह आया था।

जब परमेश्वर ने सभी दण्ड और श्रापों को जिनमें मनुष्य की मृत्यु अन्तिम थी सुनाया, तो आदम और हव्वा ने भविष्य के लिए किसी भी प्रकार की आशा को त्याग दिया होगा। परमेश्वर, अवश्य ही उनको मृत्यु दण्ड उसी समय दे सकता था जब उन्होंने पाप किया था, जैसा कि उसने उन्हें 2:17 में चिताया था। फिर भी, आने वाले न्याय के मध्य में, मनुष्य को उस भविष्यवाणी के कारण, कि स्त्री का वंश सर्प का सिर कुचलेगा, आशा प्राप्त हुई (3:15)।

एक नया नाम और एक नया आवरण आदम का विश्वास और परमेश्वर का अनुग्रह (3:20, 21)

20और आदम ने अपनी पत्नी का नाम हव्वा रखा; क्योंकि जितने मनुष्य जीवित है उन सब की आदिम माता वही हुई। 21और यहोवा परमेश्वर ने आदम और उसकी पत्नी के लिए चमड़े के अँगरखे बनाकर उनको पहना दिए।

आयते 20. हव्वा חַוָּה *(हव्वा)* शब्द की ध्वनि सुनकर यह חי *(हे)* से सम्बन्धित प्रतीत होता है जिसका अर्थ "जीवित" है, और इसे LXX में Ζωή (*ज़ोए,* "जीवन") के रूप में अनुवाद किया गया है। शब्दों का प्रयोग करते हुए उत्पत्ति का लेखक बताता है कि आदम ने उसको यह नाम क्यों दिया। यह वर्णन कुछ पहेली जैसा लगता है, क्योंकि यह कहता है उसने उसका नाम "हव्वा" रखा **क्योंकि वह सभी जीवितों की माता थी**। जैसा की अभी तक हव्वा ने किसी भी बच्चे को जन्म नहीं दिया था, आदम कैसे कह सकता है कि वह "सभी जीवितों की माता थी"? यह शब्द "थी" इब्रानी क्रिया का पूर्ण रूप है, जो यह संकेत करता है की होने वाला कार्य पहले ही किया जा चुका है। आप यह अपेक्षा कर सकते हैं कि यह भविष्य में होने वाले अपूर्ण क्रियारूप की ओर संकेत करता है और इसका अनुवाद यह भी किया जा सकता है, *"वह सभी* जीवितों की माता *होगी।"* क्रिया "थी" "भविष्यात्मक निश्चिन्तता" का उदाहरण प्रतीत होती है, जो भविष्य में होने वाली घटना की निश्चिन्ता को व्यक्त करती है। यह घटना कहने में इतनी निश्चित है कि इसके विषय में बोलते समय ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे यह

घटना पहले ही घट चुकी है।

हव्वा का नामकरण आदम के विश्वास का प्रकटीकरण था, यद्यपि उन दोनों को मृत्यु के द्वारा डराया तो गया, फिर भी उसने यह विश्वास नहीं किया की वे पृथ्वी पर प्रथम और अन्तिम मनुष्य होंगे। उसने भविष्य की ओर देखा, इस विश्वास के साथ की हव्वा वायदे के वंश को जन्म देगी (3:15), जो किसी भी रुप में सर्प का सिर कुचलेगा।

आयते 21. आदम और उसकी पत्नी को वाटिका से बाहर निकालने से पहले परमेश्वर के अनुग्रह का अन्तिम कार्य उन्हें **खाल के वस्त्र** पहनाना था। यह उनके द्वारा 3:7 में किए गए उस दयनीय प्रयास के विपरीत था जहाँ उन्होंने अंजीर के पत्तों से वस्त्र बनाकर स्वयं को ढकने का प्रयास किया था। "वस्त्रों" के लिए इब्रानी शब्द כְּתֹנֶת *(कुथोनेथ)* का अर्थ है "चोगा" जो मनुष्य की देह पर पहना जाता है, अक्सर यह वस्त्र लम्बी या आधी बाजू का होता है और घुटनों या एड़ियों तक लंबा होता है (देखें 37:3; निर्गमन 28:4)।[25] "खाल" के लिए प्रयोग होने वाला शब्द עוֹר *(ओर)* जानवरों को ढकने के लिए प्रयोग होने वाली बाहरी चमड़े के लिए हुआ है (देखें 27:16; लैव्य. 4:11)। यद्यपि लेखक यहां पर बलि के बारे में वर्णन नहीं कर रहा है, पर वास्तविकता में यह दर्शाता है कि आदम और हव्वा के पाप के परिणामस्वरूप किसी जानवर को मारना पड़ा। स्पष्ट तौर से, परमेश्वर ने जानवर को मारा और उसकी खाल को उन दोनों को ढकने के लिए प्रयोग किया। परमेश्वर पुरुष और उसकी पत्नी को वाटिका से बाहर ऐसे उघाड़े ही जाने नहीं देता, इसलिए उसने उनके लिए सुरक्षात्मक कपड़े उपलब्ध कराये। फिर भी, उनके वस्त्र उनके पाप और इस बात को याद दिलाते थे कि उनके दोषरहित जीवन का समय सदा के लिए समाप्त हो चुका था।

वाटिका से निकाला जाना (3:22-24)

22फिर यहोवा परमेश्वर ने कहा, "मनुष्य भले बुरे का ज्ञान पाकर हम में से एक के समान हो गया है: इसलिये अब ऐसा न हो कि वह हाथ बढ़ाकर जीवन के वृक्ष का फल भी तोड़ के खा ले और सदा जीवित रहे।" 23इसलिये यहोवा परमेश्वर ने उसको अदन की वाटिका से निकाल दिया कि वह उस भूमि पर खेती करे जिस में से वह बनाया गया था। 24इसलिये आदम को उसने निकाल दिया और जीवन के वृक्ष के मार्ग का पहरा देने के लिए अदन की वाटिका के पूर्व की ओर करुबों को, और चारों ओर घूमने वाली ज्वालामय तलवार को भी नियुक्त कर दिया।

आयते 22. सर्प की भविष्यवाणी (3:5) बड़े ही घुमावदार और विकृत रूप से पूरी हो गयी। **परमेश्वर** ने आदम और हव्वा के वाटिका से निकाले जाने का यह कारण दिया कि: **"भले और बुरे का ज्ञान पाकर मनुष्य हम में से एक के समान हो गया है।"** यहाँ पर बहुवचन **"हम"** परमेश्वर ने संभवतः उन स्वर्गदूतों के लिए

प्रयोग किया जो उसकी सभा में उसके आसपास उपस्थित रहते हैं (1:26 में दिये गये विवरण को देखें)। यह एक कारण दिखाई देता है क्योंकि वचन 24 कहता है कि, जब आदम और हव्वा को वाटिका से निकाल दिया गया, तब परमेश्वर ने "करुबों" (स्वर्गदूतों) को "जीवन के वृक्ष की सुरक्षा के लिये नियुक्त कर दिया।"

परमेश्वर और उसकी स्वर्गीय सभा **"भले और बुरे"** के अंतर को जानते थे - अनुभव से नहीं**,** परन्तु इस जानकारी से कि परमेश्वर ही है जो सही को गलत से अलग करता है।[26] कोई भी व्यवहार, विचार, या कार्य जो परमेश्वर के स्वभाव, चरित्र, या इच्छा के विरुद्ध है पाप कहलाता है। जब आदम और हव्वा ने घमंड में आकर परमेश्वर के समान "बुद्धिमान" होने का फैसला किया (3:6), तब वे अपनी स्वतंत्रता का दावा करते हुए परमेश्वर की प्रगट इच्छा के प्रति अनाज्ञाकारिता में ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे, और स्वयं को स्वतंत्र घोषित करना चाहते थे और अपने स्वयं के "ईश्वर" बनना चाहते थे।

परमेश्वर का सिंहासन हथियाने की उनकी इच्छा में, यदि **वे जीवन के वृक्ष को लेने का प्रयास करते, और उसके फल को खाते, और पाप में हमेशा जीवित रहते**, तो वे अपने घमण्ड और बलवे को परमेश्वर के विरुद्ध मिला लेते। उन्हें यह सिखाने की आवश्यकता थी कि शारीरिक जीवन वह आशीष है जो मनुष्य परमेश्वर के अनुग्रह से पाता और आनन्द उठाता है और अनन्त जीवन हमारे सृजनहार की ओर से सर्वश्रेष्ठ वरदान है जो उनके लिए है जो उस से प्रेम करते हैं और उसकी सेवा करते हैं। मनुष्य ज्ञान और अपने प्रयासों के द्वारा कभी भी अनन्त जीवन प्राप्त नहीं कर सकता है।

आयते 23. आगे के लिए किसी भी प्रकार की अनाज्ञाकारिता को रोकने के लिए, **परमेश्वर ने** [उन्हें] **अदन की वाटिका से बाहर निकाल दिया**। "निकाल दिया" जाने के लिए जिस क्रिया का प्रयोग हुआ है वह שָׁלַח *(शालाक)* से आया है, जिसका अर्थ "निकाल देना" या "निष्कासित कर देना" है। यह वह शब्द है जो अब्राहम द्वारा हाजिरा, इशमाएल, और उसके परिवार में दूसरे पुत्रों को निकाल देने के लिए प्रयोग किया गया है, जो शायद इसहाक के प्रतिद्वन्दी हो सकते थे (21:14; 25:6)। इसके अलावा शालाक में निष्कासन और रिश्तों का अन्त भी शामिल है, जिस प्रकार, जब पुरुष अपनी पत्नी को तलाक देकर निकाल देता है या जैसे परमेश्वर ने इस्राएल को परमेश्वर को त्याग देने और झूठे देवताओं की आराधना करने की वजह से बंधुवाई में भेज दिया था (यशा. 50:1; यिर्म. 28:16)।[27]

वटिका में से निकाल दिये जाने के बाद पुरुष का कार्य **उस भूमि को उपजाना था जिसमें से वह निकाला गया था**। न केवल आदम और हव्वा ने उस घनिष्ठ संबंध को खो दिया जिसका एक समय वे परमेश्वर के साथ आनन्द उठा रहे थे, परन्तु उन्हें उस कठिन वातावरण में भेज दिया गया जो उनके विरूद्ध था। विगत में, आदम को केवल वाटिका की देखभाल करनी थी, जो बहुतायत में फल उपजाती थी, परन्तु अब उसे सब कुछ नए तरीके से शुरु करना था और अपने लिए उस भूमि में से जो शाप के आधीन थी और अपना सर्वोत्तम देने के लिए

प्रतिबंधित थी उसमें से अपनी एक वाटिका को बनाना था। पहले स्त्री और पुरुष परमेश्वर पर विश्वास करने से चूक गये थे, वर्जित पेड़ के फल को खाने से मना किए जाने के उसके उस उद्देश्य को जिसे वे समझ न सके। परिणामस्वरूप, उन्हें अनिमंत्रित और निराशापूर्ण संसार का सामना करना पड़ा। केवल परमेश्वर के अनुग्रह के कारण इस निराश्रय दम्पत्ति को शरणस्थान मिल सकेगा।[28]

आयते 24. परमेश्वर ने **मनुष्य को वाटिका से बाहर निकाल दिया**। यह अजीब प्रतीत होता है कि स्त्री का वर्णन पद 22 से 24 तक नहीं हुआ क्योंकि निश्चित तौर से यह उसके लिए निर्धारित किया गया था कि वह अपने पति के साथ वाटिका से निकाल दी जाए। इसलिए पुरुष पर परमेश्वर का न्याय इस बात पर ज़ोर देता है कि चूंकि वास्तविकता में उसे ही भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष का फल न खाने की आज्ञा मिली थी (2:17)। दूसरा सुझाव यह है कि पुरुष जीवन के वृक्ष का फल खाने की कोशिश कर सकता था, और वह उसमें से खाकर अपने ऊपर से मृत्यु दण्ड को हटा सकता था।

परमेश्वर ने **जीवन के वृक्ष** तक किसी के भी पहुँचने की कोशिश को **करुबों की ... सुरक्षा में नियुक्त करके रोक दिया**। वाटिका का प्रवेश **पूर्व** की तरफ़ था[29], और यह वह स्थान था जहाँ करूब (बहुवचन करूब का) **नियुक्त थे**। "करूबों" शब्द का (या "करूब") लगभग 90 बार बाइबल में प्रयोग किया गया है। यह उन स्वर्गदूतों के विषय में है जो पंखों के साथ होते हैं, जो हमेशा परमेश्वर की पवित्रता की सुरक्षा करते हैं। मिलापवाले तंबू में, चिन्ह के रुप में सोने के दो करूब परमेश्वर के सिंहासन वाचा के संदूक पर स्थापित किए गये थे (निर्गमन 25:18-22); और सुलैमान के मन्दिर के अतिपवित्र स्थान में भी दो करूब, जैतून की लकड़ी में खोद कर और सोने से मढ़कर बनाये गये थे (1 राजा 6:23-28)।[30]

ज्वालामय तलवार जो सभी दिशाओं में घूमती थी परमेश्वर के न्याय को दिखाती है। यह किसी भी घुसपैठिए को मृत्यु से डराती थी।[31] कहानी की सबसे दुखद विडम्बना यह है कि आदम को वास्तविकता में वाटिका की "देखभाल" שָׁמַר *(शामार)* के लिए नियुक्त किया गया था (2:15), परन्तु अब करुबों और "ज्वालामय तलवार" को उसके विरुद्ध वाटिका की सुरक्षा שָׁמַר *(शामार)* के लिए नियुक्त कर दिया गया था।

अनुप्रयोग

मनुष्य का चुनाव (2:9, 16, 17; 3:1-24)

"मेरे जीवन का केंद्र क्या होगा?" वाटिका के मध्य में लगे भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष ने एक परीक्षा खड़ी कर दी, कि जीवन का केंद्र क्या होगा: परमेश्वर या स्वयं। परमेश्वर, निःसंदेह, आत्मा है (यूहन्ना 4:24); परंतु वह सृष्टिकर्ता भी है जिसने इस भौतिक संसार को और जो कुछ इसमें है उसे बनाया है। जब उसने मनुष्य को अपने स्वरूप में रचा तब उसने एक ऐसे प्राणी की रचना की जो न केवल भौतिक है, परन्तु नैतिक और आत्मिक भी है जो अपने जीवन के विषय में

चुनाव कर सकता है।

स्वतंत्र इच्छा एक महान आशीष है, परंतु यह अपने साथ एक गंभीर दायित्व को भी लाता है, जिसमें किए गए गलत चुनावों के परिणाम भी सम्मिलित है। चाहे हम इस बात का एहसास करें या न करें, हम जिस तरह का जीवन जीते हैं और हमारे जो भी बाहरी कृत्य होते हैं, इन सब के पीछे बुनियादी मुद्दा यही प्रश्न है कि: "कौन मुझपर राज्य करेगा: सृष्टिकर्ता या मैं खुद?" इस प्रश्न के पीछे मनुष्य का अभिमान है, और सर्प (शैतान) इस बात को भली भाँति जानता है कि मनुष्य के हृदय पर पकड़ बनाने और उसे परमेश्वर के खिलाफ विद्रोह करने के लिए उकसाने का सबसे तेज और आसान तरीका उसके अहंकार पर चोट करना है। (देखें नीतिवचन 16:18 और 1 तीमुथियुस 3:6, जो इस बात को दर्शाता है कि घमंड ही शैतान का मौलिक पाप था।) जब सर्प ने कहा कि "भले और बुरे" का ज्ञान पाकर प्रथम जोड़ा परमेश्वर के समान बुद्धिमान होंगे, वह अच्छे से जानता था कि यह बात उनके लिए परेशानी खड़ी करेगी। परीक्षा या प्रलोभन शायद इन शब्दों में सीधे-सीधे नज़र न आए, परंतु विचार हमेशा से बना हुआ है: कौन स्वयं अपना ईश्वर नहीं बनना चाहता, हमेशा के लिए आदेशों और रोक टोक से आज़ादी नहीं चाहता? परंतु अगर ऐसा संभव होता तो, सभी ने अपना-अपना मार्ग लिया होता, वही करते जो उन्हें भला लगता उन्हें किसी को उत्तर देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। तथापि, इस तरह के उपाय से काम नहीं बनता। मनुष्य जितना स्वयं का ईश्वर बनने और सच्चे परमेश्वर से आज़ाद होकर जीने की चाह रखता है वह उतना ही शैतान की तरह बनता जाता है। मनुष्य, जब अपनी कल्पना और बुद्धि पर छोड़ दिया जाता है तब जल्द ही वह पाप के विनाशकारी बंधन में बंध जाता है (जैसा कैन और उसके वंशजों ने किया, जो आगे जल प्रलय तक गया; 4:8, 23, 24; 6:4, 5, 11-13)।

"क्या मैं परमेश्वर पर भरोसा रखूँगा?" उस वर्जित वृक्ष ने रिश्तों की परख/परीक्षा सामने ला कर खड़ी कर दी है। यहाँ "भले और बुरे" के ज्ञान से तात्पर्य सब कुछ जानने की क्षमता रखना हो सकता है, ऐसा ज्ञान जो केवल परमेश्वर के पास है। मनुष्य इस तरह का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता - और अगर वह ऐसा कर भी ले तब भी वह इसे संभाल पाने में असमर्थ है। इस तरह देखा जाये तो यह वर्जित वृक्ष परमेश्वर के साथ मनुष्य के संबंधों की परख का वर्णन करता है, जिसमें विश्वास शामिल है। क्या मनुष्य, इस बात पर यकीन करते हुए कि परमेश्वर भला और प्रेमी है और हमारे लिए उत्तम ही चाहता है, उस पर विश्वास करेगा, या उसे एक जलन रखने वाले और अद्भुत अनुभव से वंचित रखकर धोखा देने का यत्न करने वाले परमेश्वर की तरह देखेगा, जैसा अदन में सर्प ने सुझाया था?

परमेश्वर पर विश्वास करने का मुद्दा हमेशा से मनुष्य और परमेश्वर के संबंधों का मूल रहा है। यह विशेष रूप से बाइबल के दो उदाहरणों में स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

नूह - नूह ने यह निर्णय लिया कि वह जल प्रलय द्वारा जगत और उसके सब

प्राणी को नाश कर देने वाली परमेश्वर की चेतावनी पर भरोसा करेगा। ऐसा करने के लिए उसे सारे समाज की समझ और बुद्धि के खिलाफ जाना पड़ा (मत्ती 24:35-39; इब्रा. 11:7; 2 पतरस 3:3-7)।

मूसा - मूसा ने भी परमेश्वर पर भरोसा करने का चुनाव किया। उसे मिस्र वापस जाकर इस्राएलियों को दासत्व से छुड़ाने के लिए उन सब बातों के खिलाफ जाना पड़ा जो मानवीय दृष्टिकोण से सही था। आखिरकार वह न्याय से बचता हुआ भगोड़ा था। मिस्र दुनिया का सबसे शक्तिशाली राष्ट्र था, और फिरौन एक ऐसे व्यक्ति की मांग को कभी स्वीकार नहीं करता जो चालीस सालों से जंगल में भेड़ चरा रहा था। उसके पास इब्री लोगों को देने के लिए क्या प्रमाण था कि परमेश्वर सचमुच उनको मिस्र के दासत्व से छुड़ा सकता है? (देखें: निर्गमन 3:16-4:31; 6:1-9.) छुटकारे की प्रक्रिया में हर कदम पर विश्वास की ज़रूरत थी: परमेश्वर पर विश्वास रखना कि वह इस्राएलियों को उन सभी विपत्तियों से जो उसने मिस्रियों पर डालीं (निर्गमन 8:1-12:36), फिरौन की सेना के प्रकोप से और उस समुद्र से बचाएगा जो उनके पीछे आने वालों को निगल गया (निर्गमन 14:10-31)। जंगल से गुज़रते हुए मूसा और समस्त लोगों को पानी, मन्ना और बटेर के लिए परमेश्वर पर भरोसा रखना पड़ा ताकि वे नाश न हो जायें। सीनै पर्वत के मार्ग पर घात लगाकर उन पर हमला करने वाले अमालेकियों पर विजय प्राप्त करने के लिए उन्हें परमेश्वर पर भरोसा करना पड़ा (निर्गमन 15:22-17:13; इब्रा. 11:24-29)।

और बार-बार प्रभु ने यह प्रमाणित किया कि वह इस्राएलियों को प्रेम करने वाला और सम्पूर्ण हृदय से सिर्फ़ और सिर्फ़ उनका भला चाहने वाला परमेश्वर है। फिर भी हर समय वे उसके विरोध में कुड़कुड़ाते रहे और इसी बात पर कायम रहे कि वह उन्हें जंगल में मरने के लिए मिस्र से निकाल लाया है। अंत में वे प्रतिज्ञा के देश की सीमा पर ठहर गए और अन्दर जाने से इनकार किया क्योंकि उन्हें इस बात का भरोसा नहीं था कि परमेश्वर उनको जय दिलाएगा, परमेश्वर ने मूसा से कहा “वे लोग कब तक मेरा तिरस्कार करते रहेंगे? और मेरे सब आश्चर्य कर्म देखने पर भी कब तक मुझ पर विश्वास न करेंगे?” गिनती 14:11 में विश्वास जिस शब्द से अनुवाद किया गया है उसका अर्थ “भरोसा” है। लोगों ने उस पर बौद्धिक रूप से विश्वास किया, और वे ये भी जानते थे कि उसने बहुत से महान आश्चर्य कर्म किए है; पर उन्होंने उसपर भरोसा नहीं किया, क्योंकि वे अपना जीवन और भविष्य उसे सौंपने के इच्छुक नहीं थे।

अपनी व्यक्तिगत सेवकाई के दौरान यीशु ने यहूदियों के मध्य बिल्कुल ऐसा ही अविश्वास (विश्वास की कमी) देखा। फसह के पर्व के समय बहुत से लोगों ने उसके चिन्ह और चमत्कार को, जो वह दिखाता था, देखकर उस पर विश्वास ἐπίστευσαν *(ऐपिस्टेयूसान)*, किया; “परन्तु यीशु ने अपने आप को उन के भरोसे (ἐπίστευεν) पर नहीं छोड़ा, क्योंकि वह सब को जानता था।” (यूहन्ना 2:23, 24)। अनिश्चित काल में यूहन्ना द्वारा प्रयोग में लाई गयी पहली क्रिया का आमतौर पर अर्थ ‘संकेत कार्य’ है,” इसे एक तरह का क्षणिक विश्वास या भरोसा

कह सकते है। इसमें किसी तरह की प्रतिबद्धता या समर्पण शामिल नहीं होता, इसलिए ये बचाने वाला विश्वास नहीं है। दूसरा शब्द भी उसी समरूप शब्द से निकला है जिसे अकसर "विश्वास" के रूप में अनुवादित किया गया है; परंतु अपूर्ण काल में यही लगातार विश्वास करते रहने, भरोसा करते रहने, सौंपने और स्वयं को समर्पण को दर्शाता है। यूहन्ना यही कह रहा था कि यीशु को उनके विश्वास पर विश्वास नहीं था या कि यीशु ने अपने आप को उन के भरोसे पर नहीं छोड़ना चाहता क्योंकि वे अपने आप को यीशु के भरोसे पर नहीं छोड़ेंगे। बचाने वाले विश्वास का अर्थ सिर्फ उसके अस्तित्व और आश्चर्यकर्मो को मानसिक रूप से स्वीकार करना नहीं है; इसमें भरोसे के साथ स्वयं को परमेश्वर को सौंपना होता है।

पूरे इतिहास में यही वह विश्वास का मुद्दा रहा है,आदम और हव्वा को जिसका सामना करना पड़ा। वे जानते थे कि परमेश्वर उनका सृष्टिकर्ता है वे अपना जीवन, पर्यावरण, और सारे प्रावधान के लिए परमेश्वर के ऋणी है उसी पर निर्भर है। फिर भी वे अपना निर्णय स्वयं लेना चाहते थे उसकी आज्ञा और उस पर भरोसा करने के विरुद्ध जाकर कि उनके लिए क्या अच्छा है।

"क्या मैं परमेश्वर की आज्ञा का पालन करूँगा?" वर्जित वृक्ष हमारे सामने आज्ञा की परख या परीक्षा को प्रस्तुत करता है। ऐसे में पहले दंपत्ति/जोड़े की परीक्षा का परिणाम नकारात्मक आया: कुछ वर्जित था। उनसे एक काम न करने को कहा गया था, भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाना। परीक्षा का महत्व मना किए गये कार्य में नहीं पाया जाता है, क्योंकि इस वृक्ष का फल खाना अनैतिक या आंतरिक रूप से बुरा नहीं होता। आयत 6 कहती है "सो जब स्त्री ने देखा कि उस वृक्ष का फल खाने में अच्छा, और देखने में मनभाऊ, और बुद्धि देने के लिये चाहने योग्य भी है, तब उसने उस में से तोड़कर खाया; और अपने पति को भी दिया, और उसने भी खाया।" वह फल ज़हरीला या सड़ा हुआ नहीं था, पर स्वादिष्ट और चाहने योग्य था।

वर्जित करने का उद्देश्य यह था कि परमेश्वर ने उसे और केवल उसे ही यह अधिकार था कि, मनुष्य के लिए क्या गलत है और क्या सहीं है या उसे खाना चाहिए या नहीं इसका निर्णय करें। परमेश्वर के आदेश उससे बाहर या उससे परे सही या गलत के नियमों पर शासित नहीं किए जाते। कोई काम अगर परमेश्वर करने का आदेश दे वह सही है और अगर मना करें तो वह गलत है; उसने किसी और अंतिम मापदंड की स्थापना नहीं की है।

भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष के खिलाफ रोक एक परीक्षा थी केवल ये देखने के लिए कि क्या मनुष्य परमेश्वर पर विश्वास करेगा और उसके साथ अपने रिश्तों को महत्व देगा। परमेश्वर यह जानता था कि, उसने जिस मनुष्य की रचना की है वह बगैर सीमा रेखा के जल्द ही स्वयं को इस ब्रह्मांड का केंद्र समझने लगेगा; उसकी ज़िन्दगी परमेश्वर पर केंद्रित होने के बजाय आत्म केंद्रित हो जाएगी; और उसको लगने लगेगा कि सारी बातें उनकी इच्छाओं और लालसाओं के इर्दगिर्द घूमनी चाहिए। एक बार मनुष्य का ध्यान स्वयं पर केंद्रित

हो गया, फिर वह केवल अपने विषय में सोचेगा और अपनी स्वार्थ पूर्ण लालसाओं की पूर्ति के लिए दूसरों का इस्तेमाल करेगा। वह अपने आस पास मौजूद लोगों कि ज़रूरतों के प्रति असंवेदनशील हो जायेगा। आसान शब्दों में, वह परमेश्वर की तरह बनने के बजाय शैतान की तरह बन जायेगा।

जब माता पिता अपने बच्चों को गंभीर समस्याओं से बचाने के लिए दस आज्ञाओं का इस्तेमाल करते हैं तो अकसर उन आज्ञाओं को मनमानी या स्वेच्छित नियम व्यवस्था के रूप में देखा गया है। जैसे सर्प ने परमेश्वर द्वारा आदम और हव्वा को भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने को मना करने के पीछे उनके उद्देश्य या प्रयोजन पर वाद विवाद और संदेह किया; वैसे ही आज बच्चे भी अपने माता पिता द्वारा निर्धारित किए गए नैतिक नियमों के पीछे उनके उद्देश्य पर सवाल उठाते है। मनमानी आदेशों के विपरीत, नैतिक या न्यायसंगत नियम परमेश्वर के स्वभाव और अस्तित्व का हिस्सा है। नैतिक दृष्टिकोण से, वह अनंतकाल से स्वयं में अटल और एक समान है। याकूब कहता है “जिस में न तो कोई परिवर्तन हो सकता है, और न अदल बदल के कारण उस पर छाया पड़ती है” (याकूब 1:17)। दस आज्ञा जैसी व्यवस्था के पीछे जो सिद्धांत पाए जाते वह अनंतकाल से सत्य है क्योंकि वे परमेश्वर की वास्तविक प्रकृति और स्वभाव को प्रगट करते हैं।

परमेश्वर ने मनुष्य को वाटिका में एक आज्ञा दी। जब प्रथम जोड़े ने उसे परमेश्वर की मनमानी या स्वेच्छित आज्ञा समझ कर उसका उल्लंघन किया तब उसका परिणाम दुखद और विनाशकारी था। उनका यही एक कार्य उन्हें झूठ बोलने, कुतर्क करने और, पहले एक दूसरे पर फिर सर्प पर और अंत में परमेश्वर पर दोष लगाने तक ले गया। सब तरह के पाप सत्य को विकृत रूप दे देते हैं, चाहे वह स्वेच्छित और मनमानी नज़र आने वाले आदेशों के विरुद्ध किया गया हो या नैतिक और उचित आदेशों के विरुद्ध। आदम और हव्वा न तो परमेश्वर के प्रति, न स्वयं के प्रति और न एक दूसरे के प्रति सच्चे थे क्योंकि उन्होंने अपने द्वारा किए गए व्यवहार के लिए सिर्फ़ बहाने बनाये।

अगर मनुष्य अपने अन्दर और अपने मानवीय संबंधों में मधुरता चाहता है, तो यीशु का सत्य और खरा जीवन उस तरीके की पुष्टि करता है जिस तरीके से मनुष्य को जीना चाहिए। कोई घर या समाज लम्बे समय तक बना नहीं रह सकता अगर उसका आधार लोगों के मध्य सच्चाई या सत्य न हो। “परन्तु तुम ने व्यवस्था की गम्भीर बातों को” (मत्ती 23:23) और “बड़ी और मुख्य आज्ञा” (मत्ती 22:38) इस बात को दर्शाता है कि हम कैसे होने के लिए रचे गए थे। हम ईश्वर होने के लिए या ध्यान का केंद्र होने के लिए नहीं रचे गए है। हमारे जीवन के लिए प्रमुख आज्ञा यह है कि हम अपना ज़्यादा जीवन स्वयं को खुश करने के बजाय, परमेश्वर से प्रेम रखें (उसे अपने जीवन का केंद्र बनाये) और अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रखें। इसके लिए ऐसे जीवन की आवश्यकता है जो पहले परमेश्वर की ओर उठे और फिर बाहर अपने साथ रहने वाले लोगों के लिए। हमें प्रतिदिन पवित्रता, धार्मिकता, दया, और कृपा का अभ्यास करना चाहिए। हमें

इस संसार में परमेश्वर के स्वभाव और चरित्र का प्रदर्शन करना है, ताकि सारे लोग यह बात जान लें कि हमारा परमेश्वर कैसा अद्भुत है, और उसकी महिमा करें (मत्ती 5:16, 33-48; लूका 6:35, 36)।

परमेश्वर को चुनना - जीवन को चुनना (3:1-13)

जब आदम और हव्वा दोनों ने उस वर्जित वृक्ष की ओर देखा उनके सामने जीवन या मृत्यु जैसा गंभीर चुनाव था। लोग जीवन चाहते है - पर अधिकांश इसे अपनी शर्तों पर चाहते है। वे तब तक परमेश्वर के अनुसार जीते है जब तक उन्हें उचित लगता है: अगर मांगे बहुत ज़्यादा नहीं है, अगर वह अभी भी वह सब कुछ कर सकते हैं जो वह करना चाहतें है, और अपना रास्ता खुद बना सकते है तब कोई आपत्ति नहीं है। आदम और हव्वा का संघर्ष यही था क्योंकि शैतान ने परमेश्वर के मार्ग को अनुचित और अकारण साबित कर दिया। बहकाने वाले के अनुसार या तो उन्होंने मृत्यु के विषय में परमेश्वर को गलत समझ लिया था या परमेश्वर झूठ बोल रहा था क्योंकि वह जानता था वर्जित वृक्ष से खाने के पश्चात वे परमेश्वर के सामान हो जायेंगे।

सर्प यह दर्शाता है कि केवल दो ही मार्ग हैं - जीवन और मृत्यु - जो बहुत कठोर लगता है। हालाँकि आदम ने इन्हीं दो विकल्पों के विषय में ईश्वरीय निर्देश सुना था, परंतु हव्वा के द्वारा उसने यह मान लिया कि परमेश्वर नहीं पर शैतान सत्य बोल रहा था। जब आदम और हव्वा ने फल लिया और उसमें से खाया तब उन्होंने अनजाने में मृत्यु का मार्ग चुन लिया। यह वही मौलिक चुनाव है जिसका सामना मनुष्य जाति हमेशा से करती आ रही है। यह हममें से प्रत्येक को एक निर्णय लेने के लिए बुलाता है: जीवन या मृत्यु, हम क्या लेना चाहेंगे?

परमेश्वर अपने बच्चों से चाहता है कि वे उसके वचन का पालन करें जो उन्हें जीवन तक पहुँचायेगा। कभी कभी उसके निर्देश हमें समझने में कठिन लगते हैं जैसा कि बाइबल के कई उदाहरणों में देखा जा सकता है।

इस्राएलियों को फसह का मेमना तैयार करना था और अपने दरवाज़े के दोनों अलंगो और चौखट पर मेमने का लहू लगा कर घर के भीतर ही उसे खाना था। जिसने भी इस ईश्वरीय आदेश का पालन किया उन्हें जीवन देने की प्रतिज्ञा की गयी; परंतु जितनों ने इसका पालन नहीं किया उन्हें अपने पहलौठों की मृत्यु की पीड़ा सहनी पड़ी, मनुष्य और जानवर दोनों (देखें निर्गमन 12:1-14, 28-30)। मानवीय दृष्टिकोण से देखें तो ऐसे निर्देश मूर्खता पूर्ण नज़र आये होंगे। फिर भी चेतावनी सही सिद्ध हुई: केवल वही लोग जो लहू के तहत फसह का भोज खा रहे थे, परमेश्वर के न्याय से बच सके।

जब इस्राएली मिस्र से निकल रहे थे तब फिरौन का मन कठोर हो गया था। उसने उनका समुद्र तक पीछा किया जहाँ से उनके निकलने के लिए कोई जगह नहीं थी। मूसा के लिए परमेश्वर का यह निर्देश था कि वह अपनी लाठी समुद्र के ऊपर उठाये और लोगों को समुद्र कि तरफ़ बढ़ने के लिए तैयार करें। एक बार फिर जीवन या मृत्यु सामने थी; परन्तु यह एक विरोधाभासी चुनाव था: समुद्र में

उतरना, जो मृत्यु का गले लगाने जैसा प्रतीत हो रहा था, वह असल में जीवन का मार्ग था। फिरौन की सेना के आगे आत्मसमर्पण करके मिस्र को लौट जाना शायद ज़िन्दगी बचाने का एक मात्र रास्ता नज़र आ रहा था, परंतु वास्तव में वह मार्ग मृत्यु को लेकर आता।

मूसा ने जब इस्राएल की संतान को जो प्रतिज्ञा के देश में प्रवेश करने जा रहे थे, अपना बिदाई सन्देश दिया, उसने उन्हें दूसरे देवी-देवताओं के पीछे न जाने की चेतावनी दी। उसने स्पष्ट कर दिया कि अगर वे इस परीक्षा में गिरे तो जिस प्रतिज्ञा के देश में वे प्रवेश करने जा रहे है उसमें नाश हो जायेंगे। अपने भाषण के अंत में उसने कहा,

> मैं आज आकाश और पृथ्वी दोनों को तुम्हारे सामने इस बात की साक्षी बनाता हूं, कि मैं ने जीवन और मरण, आशीष और शाप को तुम्हारे आगे रखा है; इसलिये तू जीवन ही को अपना ले, कि तू और तेरा वंश दोनों जीवित रहें; इसलिये अपने परमेश्वर यहोवा से प्रेम करो, और उसकी बात मानों, और उस से लिपटे रहो; क्योंकि तेरा जीवन और दीर्घ जीवन यही है, और ऐसा करने से जिस देश को यहोवा ने अब्राहम, इसहाक, और याकूब, तेरे पूर्वजों को देने की शपथ खाई थी उस देश में तू बसा रहेगा (व्यव. 30:19, 20)।

लोगों को प्रेरित किया गया कि वे परमेश्वर से प्रेम करने के द्वारा, उसके वचन का पालन करने के द्वारा और उसमें बने रहने के द्वारा, मृत्यु और श्राप के ऊपर जीवन और आशीष का चुनाव करें। ऐसा करने के से उनकी आयु लम्बी होगी और वे प्रतिज्ञा के देश में अपने जीवन के दिनों का आनंद लेंगे और मृत्यु और श्राप से बचेंगे। यह बात कहीं न कहीं आदम और हव्वा के उस अनुभव की याद दिला रही है जहाँ उन्होंने, मूसा द्वारा इस्राएलियों को दी गयी चेतावनी के ठीक विपरीत किया था। उन्होंने परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करते हुए वाटिका में अपने लिए मृत्यु और श्राप को चुना और लम्बी आयु और सभी आशीष को खो दिया।

यीशु की सेवकाई के दौरान*, उसने सिखाया कि सकरा मार्ग जीवन तक पहुंचाता है और चौड़ा मार्ग विनाश (मृत्यु) तक पहुंचाता है* (मत्ती 7:13, 14)। "जो पुत्र पर विश्वास करता है, अनन्त जीवन उसका है; परन्तु जो पुत्र को नहीं मानता, वह जीवन को नहीं देखेगा, परन्तु परमेश्वर का क्रोध [मृत्यु या अनन्त अलगाव] उस पर रहता है" (यूहन्ना 3:36)। मैं तुम से सच-सच कहता हूं, जो मेरा वचन सुनकर मेरे भेजने वाले की प्रतीति करता है, अनन्त जीवन उसका है, और उस पर दंड की आज्ञा नहीं होती परन्तु वह मृत्यु से पार होकर जीवन में प्रवेश कर चुका है (यूहन्ना 5:24)। "यीशु ने उस से कहा, मार्ग और सच्चाई और जीवन मैं ही हूं" (यूहन्ना 14:6)। परंतु जो उसपर विश्वास नहीं लाते वे अपने पाप की दशा में ही मर जायेंगे (खोये रहेंगे) वे वहां नहीं जा सकते जहाँ वह जाता है, (स्वर्ग में) (यूहन्ना 8:21, 24)।

जब हम जीवन और मृत्यु के बीच में चुनाव का सामना करते हैं, हम जीवन

चुनने के लिए मजबूर हैं। यीशु मरा ताकि हमें मरना न पड़े। आइये उसमें होकर जीवन का चुनाव करें।

घमंड का पाप (3:5, 6)

घमण्ड, ही वह मूलभूत पाप है जो परमेश्वर के खिलाफ़ किए गए हर विद्रोही कार्य के पीछे पाया जाता है। यह नाटकीय ढंग से सोर के प्रधान के विरुद्ध ताना कसते हुए व्यक्त किया गया है, जिसने अपने मन में फूल कर कहा, "मैं ईश्वर हूँ, मैं समुद्र के बीच परमेश्वर के आसन पर बैठा हूँ" उसे कहा गया, "यद्यपि अपने आप को परमेश्वर सा दिखाता है, तौभी तू ईश्वर नहीं, मनुष्य ही है" (यहेज. 28:2)। यहेजकेल बहुत ही प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग करते हुए इस अन्य जाति राजा की तुलना अदन की वाटिका के प्रथम वासियों से करता है, जिन्होंने परमेश्वर के समान बुद्धिमान होने की चाह में पाप किया:[33] "तू अदन में था, परमेश्वर की वाटिका में। ... जिस दिन से तू सृजा गया, और जिस दिन तक तुझ में कुटिलता न पाई गई, उस समय तक तू अपनी सारी चाल चलन में निर्दोष रहा" (यहेज. 28:13-15)।

भविष्यवक्ता, राजा के घमंडी हृदय के विषय में बोलते हुए एक और बात कहता है "सुन्दरता के कारण तेरा मन फूल गया, और वैभव के कारण तेरी बुद्धि बिगड़ गई थी" (यहेज. 28:17)। इसलिए परमेश्वर ने यह कहते हुए कि, यह अपने रूपात्मक अदन की वाटिका को खो देगा और अपने ऊँचे सिंहासन से ईश्वरों के बीच गिराया जाएगा, उस दुष्ट राजा पर ईश्वरीय दण्ड की आज्ञा दी। राजा पर यह घोषणा की गई कि वह "परदेशियों के हाथों से खतनाहीन लोगों की तरह मारा जायेगा" (यहेज. 28:8; देखें 28:10, 19)।

जैसा कि यीशु ने कहा, यह वह झूठ है जो आरंभ से ही मनुष्य जाति में फैला है (देखें यूहन्ना 8:44): घमंड से भरे हुए मनुष्य यह सोचते हैं कि वे स्वयं को परमेश्वर से स्वतंत्र घोषित कर सकते हैं और अपना रास्ता खुद बना सकते हैं। वे यह सोचते हैं कि वे सुरक्षित रह कर पाप कर सकते है - और उन्हें अपनी अनाज्ञाकारिता के दंड का भी भय नहीं। फिर भी, बार-बार मनुष्य का अनुभव इस सत्य की गवाही देता है कि "तुम को तुम्हारा पाप लगेगा" (गिनती 32:23)। सबसे बड़ी दुखद बात यह है कि पाप की मज़दूरी आज़ादी और जीवन नहीं है, परन्तु अन्त में दुख और मृत्यु है (रोमियों 6:23), जो सभी मनुष्य में फैल गई है (रोमियों 5:12)।

समाप्ति नोट्स

[1]रॉबर्ट एल. एलडॉन, "נָחָשׁ," *TWOT* में, 2:571. [2]इस कहानी में गिलगामेश, एक अर्ध दैवीय राजा, अपने वृद्धावस्था में समुद्र की गहराई में सैर करके एक पौध ढूँढने का प्रयास करता है ताकि उसको खाकर उसकी जवानी पुनः लौट सके। वापस अपने घर लौटते समय उसने एक गहरे कुण्ड में ठहरकर विश्राम लेने का निर्णय लिया। जब वह उस कुण्ड के जल का आनंद उठा रहा था

तो एक सर्प को उस पौधे की खुशबू ली और उसने उस राजा से वह पौधा छीनकर खा लिया। परिणामस्वरूप, उस सर्प की खाल उतर गई और उसकी जवानी वापस लौट आई। (*दि एपिक आफ गिलगामेश,* 11.263-296.) [3]विज़डम आफ सोलोमोन 2:23, 24 (NRSV)। [4]रोनाल्ड बी. एलेन, “עָרוּם,” *TWOT* में*,* 2:697-98. [5]पौलुस ने रोमियों 5:12-19 में प्रथम पाप का बोझ सीधे तौर पर आदम पर डाल दिया। [6]यह संभव है कि परमेश्वर की मूल आज्ञा में वृक्ष को न छूने की आज्ञा भी सम्मिलित हों, लेकिन लेखक ने जान बूझकर इसका विवरण 3:3 तक गुप्त रखा। फिर भी, हव्वा के प्रत्युत्तर में आम तौर पर परमेश्वर की आज्ञा को अतिशयोक्तिपूर्ण प्रस्तुत करना पाया जाता है। [7]रॉबर्ट एल. एलडॉन, “תַּאֲוָה,” *TWOT* में*,* 1:18. [8]लुडविग कोएहलर और वाल्टर बौमगार्टर, *द हीब्रू एण्ड अरामाइक लेक्सीकन आफ थे ओल्ड टेस्टामेन्ट,* अध्ययन संसकरण, अनुवादक एंव संपादक एम. ई. रिचार्डसन (बोस्टनः ब्रिल, 2001), 2:1083. [9]यह उसी प्रकार का प्रश्न है जिसे परमेश्वर ने कैन से पूछा था, “तेरा भाई हाबिल कहां है?” (4:9)। यहोवा बड़े भाई द्वारा छोटे भाई की हत्या और उसको मिट्टी में दबाने के अपराध के बारे में जानता था। इसलिए, जब कैन ने अपने भाई हाबिल के स्थिति के बारे में बताने से इनकार किया, तब परमेश्वर ने कहा, “तेरे भाई का लोहू भूमि में से मेरी ओर चिल्ला कर मेरी दोहाई दे रहा है!” (4:10)। [10]केन्नेथ ए. मैथ्यूस, *जेनेसिस 1-11:26,* द न्यू अमेरिकन कमेन्ट्री, वोल्यूम 1A (नैशविल्लेः ब्रोडमैन एण्ड हॉलमैन, 1996), 241.

[11]विक्टर पी. हैमिल्टन, *द बुक आफ जेनेसिसः चैप्टर्स 1-17,* द न्यू इंटरनेशनल कमेन्ट्री ओन दी ओल्ड टेस्टामेंट (ग्रैंड रैपिड्स, मिशीगनः विलियम बी. एर्डमैन्स पब्लिशिंग कम्पनी, 1990), 194. [12]एच. सी. लयूपोल्ड*, एक्स्पोसीशन ऑफ़ जेनेसिस,* वॉल्यूम 1 (एन.पी.: वारबर्ग प्रेस, 1942; पुनः प्रकाशित, ग्रैंडरैपिड, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1953), 160. [13]*तारगुम* में “तारगुम ऑफ़ पलेस्तीन,” अनुवाद, जे, डब्लू एथरिज (न्यू यॉर्क: KTAV पब्लिशिंग हाउस, 1968), 166. इसके अतिरिक्त, जोसेफस ने कहा कि परमेश्वर ने “उसे अपने पैर इस्तेमाल करने से वंचित किया (जोसेफस *एंटीक्यूटीस* 1.1.4)। [14]डेरेक किडनर, *जेनेसिस: ऍन इंट्रोडक्शन एंड कमेन्ट्री,* दी टिंडल ओल्ड टेस्टामेंट कमेन्ट्रीस (डाउनर्स ग्रोव, Ill.: इंटर-वर्सिटी प्रेस, 1967), 70. [15]वाल्टर सी. कैसर, “זֶרַע,” *TWOT* में, 1:253. [16]हैमिलटन, *द बुक ऑफ़ जेनेसिस: अध्याय 1-17,* 197. [17]एच. डी. प्रेउस, “זֶרַע,” *थियोलॉजिकल डिक्शनरी ऑफ़ द ओल्ड टेस्टामेंट* में अनुवादक डेविड ई. ग्रीन, एडिटर जी. जोहन्नेस बोत्टरवेक्क और हेल्मर रिंगग्रेन *ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईड्र्समैन पब्लिशिंग कम्पनी, 1980), 4:150. [18]इस व्यक्त को सरल रीति से व्यक्त करते हुए, यरूशलेम के तारगुम के अनुसार, “तथापि स्त्री के पुत्रों के लिए दवा होंगी, लेकिन तेरे लिए, हे सर्प, कोई दवा नहीं होगी: लेकिन यह इनके लिए है कि राजा मेशिहा [मसीहा] के दिनों में एड़ी का इलाज किया जाएगा” पलेस्तीन के तारगुम में भी इसी प्रकार का वर्णन है। (द तारगुम, 166)। [19]जैक पी. लुइस, “द वूमेन सीड (उत्पत्ति 3:15),” *जर्नल ऑफ़ द इवैंजेलिकल थियोलॉजिकल सोसाइटी* 34, नम्बर 3 (सितम्बर 1991): 319. [20]विलियम सैनफोर्ड लासोर, “प्रोफिसी, इन्स्पीरेशन, एंड *सेनसस प्लेनिओर,*” *टिंडल बुलेटन* 29 (1978): 57.

[21]गॉर्डोन जे. वेन्ह्म, *न्यू बाइबल कमेन्ट्री: 21 सेंचुरी एडिशन* में “जेनेसिस,” सम्पादक जी. एच. वेन्ह्म, जे. ए. मोत्येर, डी. ए. कार्सन, और आर. टी. फ्रांस (डाउनर ग्रोव Ill., इंटर-वर्सिटी प्रेस, 1994), 63. [22]विक्टर पी. हैमिल्टन, “תְּשׁוּקָה,” *TWOT* में, 2:913. [23]कोह्लेर और बौमगार्टनर, 1:647. [24]मार्क एस. होवेल, *हार्डिंग यूनिवर्सिटी लेक्चर* में “पैराडाइस लॉस्ट (जेनेसिस 3-4)” (1991): 35. [25]जेकब एम. म्येर्स, *द इंटरप्रेटरस डिक्शनरी ऑफ़ दी बाइबल* में “ड्रेस एंड ओर्नामेंट”, सम्पादक जार्ज आर्थर बटरिक (नैशविल: अबिंगडन प्रेस, 1962), 1:869. [26]इस कथन में वे स्वर्गदूत शामिल नहीं हैं जिन्होंने पाप किया था (2 पतरस 2:4; यहूदा 6)। [27]हरमन जे. ऑस्टेल “שָׁלַח,” *TWOT* में, 2:927-28. [28]मैथ्यूस, 257. [29]बहुत बाद में, तम्बू और मंदिर के प्रवेश द्वार पूर्वी दिशा में थे। [30]प्राचीन मध्य पश्चिम में मिश्रित जंतुओं की मूर्तियाँ महलों और मंदिरों की “सुरक्षा” के लिए इस्तेमाल की गई। इनमें अकसर मनुष्य का मुख, चील के पंख, और बैल या सिंह का शरीर होता था। (देखें डेविड एल.रोपर, रेवलेशन 12-22, ट्रुथ फॉर टुडे

कमेन्ट्री [सीरसी, अर्क: रिसोर्स पब्लिकेशन, 2002], 435.) इसके अलावा, प्राचीन मध्य पश्चिम की कला में पंखों वाले प्राणी पवित्र वृक्ष की रखवाली करते हुए अकसर देखे जा सकते हैं (देखें जॉन. एच. वाल्टन [ग्रैंड रैपिड, मिशिगन: जोंदरवन, 2009], 2, 3, 37)।

[31]गिनती 22:23, 31, 33 में नंगी तलवार लिए बालाम की गधी का रास्ता रोके एक स्वर्गदूत। व्यवस्थाविवरण 32:41, 42 "नंगी तलवार" को परमेश्वर के न्याय और शत्रुओं से बदला लेने के रूप में दर्शाता है। [32]मौलिक यूनानी हस्तलिपि के अंतर्गत अध्याय में विभाजन नहीं पाया जाता है; चूंकि यूहन्ना यूहन्ना 2:23-25 मेंपाए गए विचार आगे यूहन्ना अध्याय 3 तक देखें जा सकते है, नीकुदेमुस निःसंदेह एक उदाहरण था उन यरूशलेम के यहूदियों के मध्य, जिनके विषय में यूहन्ना बातें कर रहा था। उसने यीशु के आश्चर्यकर्म को जो वह दिखाता था देखकर उस पर विश्वास किया कि वह परमेश्वर की ओर से है; परंतु अभी तक उसके पास बचाने वाला विश्वास नहीं था क्योंकि उसने "विश्वास" नहीं किया था वह विश्वास जिसका अर्थ है स्वयं को सौंपते हुए नए सिरे से जन्म लेना (यूहन्ना 3:1-5)। [33]परमेश्वर के सामान बनने की चाह यशायाह 14:4-23 में भी पाई जाती है। वहां भी भविष्यवक्ता बेबीलोन के राजा के विषय में समान विवरण प्रस्तुत करता है जिसने प्राचीन, पूर्वी के पास के इलाकों को क्रूरता से विजय प्राप्त करके तबाह कर दिया। घमंड और अहंकार से भरी अपनी कल्पनाओं के तहत, वह स्वर्ग के सिंहासन तक चढ़ गया "ईश्वर के तारागण से अधिक ऊँचा;" परंतु वह ऊँचे से गिर जायेगा और "अधोलोक में उस गड्ढे की तह तक उतारा जाएगा।"